श्री महेंदुलाल गर्ग विज्ञान-ग्रंथावली—२

रेडियो

लेखक

श्री रा० र० खाड़िलकर

काशी नागरीप्रचारिणी सभा

२००२ वि०

प्रथम संस्करण]

परिचय

स्व० श्री महेंदुलाल गर्ग, जिनकी पुण्य स्मृति में यह ग्रंथावली प्रकाशित हो रही है, हिंदी के उन इने-गिने उत्साही और प्रतिष्ठित सेवकों में थे जिन्होंने आरंभिक दिनों में उत्तमोत्तम ग्रंथों से स्वयं उसका भंडार भरा तथा जिनकी प्रेरणा एवं उत्साहवर्द्धन से अनेक नवयुवक लेखक इस ओर प्रवृत्त हुए। उनके सुयोग्य पुत्र युक्तप्रांतीय कृषिविभाग के भूतपूर्व डिप्टी डाइरेक्टर तथा कानपुर कृषि-महाविद्यालय के वर्तमान आचार्य श्री प्यारेलाल गर्ग ने इस अनुष्ठान के लिये सभा को १०००) प्रदान किया है। इससे हिंदी में विज्ञान-विषयक उत्तमोत्तम ग्रंथ प्रकाशित किए जायँगे। पुस्तकों की बिक्री से जो आय होगी वह भी ग्रंथावली की अभिवृद्धि और संपुष्टि में ही व्यय की जायगी और इस प्रकार यह योजना दिवंगतात्मा का चिरस्थायी स्मारक बनी रहेगी।

विषय-सूची

—•—

दो शब्द

मैं श्री खाडिलकर की इस उपयोगी और सामयिक पुस्तक का स्वागत करता हूँ। भारत में रेडियो का प्रचार बराबर बढ़ता जा रहा है। ऐसी आशा करनी चाहिये कि युद्ध के बाद सस्ते स्वदेशी रेडियो सेट मिलने लगेंगे। इस दिशा में कई सफल प्रयोग हुए भी हैं पर कुछ कठिनाइयों ने अभी बाज़ार में भारत के बने सेटों को नहीं आने दिया है। हम उम्मीद करते हैं कि यह बाधाएँ भी अब दूर हो जायँगी। नये स्टेशन कभी खुलने वाले हैं। इतने बड़े देश के लिए स्टेशनों की वर्तमान संख्या बहुत कम है। इन सब बातों को देखकर यह विश्वास पुष्ट होता है कि रेडियो का प्रचार बहुत बढ़ेगा।

ऐसा होना उचित भी है। रेडियो शिक्षा और मनोरञ्जन का बहुत बड़ा साधन है। यदि स्वार्थान्ध सर्कारें उसको अपने मिथ्या-प्रचार का माध्यम न बनायें तो वह विश्व-संस्कृति और 'वसुधैव कुटुंबकम्' के कल्याणकारी सिद्धान्त के प्रचार का उत्कृष्ट उपकरण बन सकता है। आज भारतीय रेडियो विभाग सचमुच भारतीय कहलाने का पात्र नहीं है। हमारी सर्कार विदेशी है इसलिए रेडियो भारतीय लोकमत और भावना को व्यक्त नहीं कर सकता। आज कल तो उसकी संस्कृति और भाषा-सम्बन्धी नीति ने उसे राष्ट्रवादी भारत की दृष्टि में और भी गिरा दिया है। पर यह अवस्था सदा नहीं रह सकती। हमको आशा करनी चाहिये कि रेडियो विभाग अपने को पुनः लोकप्रिय बना सकेगा और अपनी सत्ता को सार्थक बनायेगा।

सभ्यता और संस्कृति के इस मित्र के स्वरूप को समझने की इच्छा स्वाभाविक है, पर ऐसा मान लिया जाता है कि यह बात सबके लिए सम्भव नहीं है। श्री खाडिलकर ने इस पुस्तक में इस धारण को गलत सिद्ध कर दिया है। गहन वैज्ञानिक तथ्यों को बहुत ही सुबोध भाषा में समझाया गया है। इस छोटी सी पुस्तक को पढ़ लेने से कोई भी शिक्षित व्यक्ति, चाहे वह भौतिक विज्ञान का विशेष रूप से विद्यार्थी न भी हो, रेडियो सम्बन्धी आवश्यक बातों की काम चलाने भर जानकारी प्राप्त कर सकता है। मुझे पुस्तक अच्छी लगी। मैं तो आशा करता हूँ कि खाडिलकर जी अपना आप अनुकरण करके हमको विज्ञान के दूसरे रोचक प्रदेशों की भी इसी प्रकार सैर करावेंगे।

सम्पूर्णानन्द।

रेडियो

रेडियो का प्रचार

गत १॥-२ सौ वर्षों में आधुनिक विज्ञान ने जो उन्नति की है उसे देखकर दाँतों उँगली दबानी पड़ती है। उसमें भी बेतार की लहरों के आविष्कार ने विज्ञान जगत में क्रांति कर दी। रेडियो का प्रचार व्यापक होने लगा। इङ्गलैण्ड में सबसे पहले नवम्बर सन् १९२२ में रेडियो पर कार्यक्रम शुरू हुए। १० वर्ष में ही ४७ लाख के करीब लाइसेंस लिये गये। भारत में पहला रेडियो क्लब १६ मई सन् १९२४ को मद्रास में खुला, पर पहला रेडियो स्टेशन ३ साल बाद बम्बई में २३ जुलाई सन् १९२७ को खुल सका। इसके बाद धीरे-धीरे कलकत्ता, दिल्ली, पेशावर, लाहौर, लखनऊ, मद्रास, त्रिचनापल्ली और ढाका में स्टेशन खुले। पटना और कराची में भी स्टेशन बनाने का प्रबन्ध होनेवाला है।

ये सब सरकारी नियंत्रण में हैं। कुछ स्टेशन रियासतों में भी हैं। इनके अतिरिक्त कुछ गैर सरकारी नियंत्रण में भी हैं—जैसे नैनी का रेडियो स्टेशन (अब यह बन्द हो गया है)।

गरीब और शिक्षा में पिछड़ा हुआ देश होने के कारण पहले पहल यहाँ रेडियो का प्रचार अधिक न हो सका। १९३२ तक तो लाइसेन्स लेनेवालों की संख्या १० हजार से ऊपर नहीं पहुँची थी। पर इसके बाद रेडियो का प्रचार तेजी से बढ़ने लगा और १९३९ के ३१ मार्च तक ७८,९९५ लाइसेन्स ले लिये गये थे।

युद्ध के कारण अब रेडियो का प्रचार बहुत ही व्यापक हो गया है। सरकारी आँकड़ों के अनुसार ३० नवंबर १९४४ को ब्रिटिश भारत में रेडियो के १,९२,१३४ लाइसेन्स लिये जा चुके थे। अन्य देशों की तुलना में ये आँकड़े चिंतनीय अवश्य हैं, पर एक तो भारत में गरीबी का सर्वत्र साम्राज्य है; जिसे एक जून खाने की चिंता सदैव तंग करती है वह रेडियो की बात कैसे सोच सकता है? दूसरे, जो थोड़े से लोग रेडियो लेने और उसके रखने का खर्च आसानी से कर सकते हैं उनमें से भी अधिकतर ऐसे हैं जो उसके बारे में मामूली जानकारी भी न होने के कारण खर्च करने से डरते हैं। अज्ञान के कारण जरा जरा सी बात पर रुपया खर्च करना पड़ता है और फिर रेडियो खरीदना बड़ा महँगा पड़ जाता है। जानकारी न होने के कारण मशीन की बाहरी सफाई तक के लिए दूकानदार का मुँह जोहना पड़ता है। लाइसेंसों की संख्या न बढ़ने का एक और महत्त्व का कारण यह है कि युद्ध के कारण बाजार में रेडियो सेटों का अभाव सा हो गया है। जो सेट हैं भी वे युद्ध के पहले की अपेक्षा बहुत अधिक दामों पर बिक रहे हैं।

रेडियो—मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन

इतना होने पर भी लोग रेडियो खरीदते हैं। असल में आज अगर हमें दुनिया के साथ रहना है तो रेडियो एक आवश्यक वस्तु हो गयी है। व्यापारियों का रेडियो के बिना एक पल भी नहीं चल सकता। रेडियो मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन है। आप अपने कमरे में बैठे हैं और एक बटन दबाते और सुई घुमाते ही संसार के विभिन्न देशों के समाचार आपके पास पहुँच जाते हैं। कमरे में बैठे बैठे आप विभिन्न देशों के संगीत का आनन्द लेते हैं और विभिन्न देशों की विभिन्न भाषाओं में होनेवाले संवाद सुनते रहते हैं। हजारों मील दूर किसी कमरे की घड़ी बज उठती है और आप अपने कमरे में

बैठे आश्चर्य करने लगते हैं कि अपनी घड़ी और उस घड़ी में इतना फर्क क्यों। लंदन टावर जैसे किसी बड़े टावर की बड़ी घड़ी घनघना उठती है और हजारों मील का फासला होने पर भी उसी क्षण आपके कान में गूँज उठती है। इस संबंध में यहाँ एक मजेदार बात का उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा। वेस्टमिंस्टर ब्रिज पर खड़ा कोई मनुष्य लंदन टावर की जगत्-प्रसिद्ध 'बिग बेन' घड़ी की आवाज अपने कान से प्रत्यक्ष सुनता है और आप उसे अप्रत्यक्ष रूप से रेडियो पर सुनते हैं। पर मजेदार बात यह है कि 'बिग बेन' की आवाज उस मनुष्य से पहले आप सुनते हैं! इस विचित्र बात का कारण यह है कि लंदन टावर पर खड़े मनुष्य के पास 'बिग बेन' की आवाज शब्द-लहरियों से पहुँचती है और आपके पास विद्युत-चुंबकीय लहरियों से। शब्द-लहरियों की गति सेकेण्ड में करीब ११२० फुट रहती है, पर विद्युत-चुंबकीय लहरियों की गति सेकेण्ड में १८६००० मील रहती है। आपको इसी कारण 'बिग बेन' की आवाज पहले सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

रेडियो का आनंद इतने में ही समाप्त नहीं होता। दुनिया भर के कम और अधिक ताकत के सैकड़ों स्टेशन चौबीसो घंटे चलते रहते हैं। सबका छपा कार्यक्रम आपके पास नहीं रहता। ऐसी स्थिति में सुई घुमाते घुमाते आप किसी दूर के छोटे से स्टेशन का पता लगाते हैं तो आपको उतना ही आनंद होता है जितना कोलंबस को (भारत के भ्रम में) अमेरिका का तट देखकर हुआ था। यह आनंद कुछ और ही होता है। आप धीरे धीरे सुई घुमाते हैं। अंग्रेजी में आपको खबर सुनाई देती है। वक्ता बताता है कि सैनफ्रांसिस्को (अमेरिका) से खबरें सुनायी जा रही हैं। आप बड़े खुश होते हैं कि आपको अमेरिका का एक स्टेशन मिला। दूसरे दिन आप अपने किसी रेडियो प्रेमी मित्र से अपनी इस नयी खोज की चर्चा बड़े गर्व से करते हैं। आपको वह मित्र बताता है कि भाई, अमेरिका का कोई स्टेशन यहाँ भारत में सुनायी नहीं देता। तुमने जो सैनफ्रांसिस्को स्टेशन सुना

वह सिंगापुर स्टेशन के जरिये (उक्त प्रदेश पर जापानी अधिकार होने के पहले यह संभव था) सुना। (जाड़े के दिनों में अमेरिका के पश्चिमी तट के कुछ स्टेशन अवश्य भारत में सुनाई देते हैं।) इस उत्तर से आप निराश या दुःखी नहीं होते, आपकी खुशी भी कम नहीं होती। एक नयी बात का पता लगने से आपका आनंद द्विगुणित हो जाता है।

इस तरह की एक नहीं, कोड़ियों मनोरंजक घटनाओं का आनंद रेडियो के श्रोताओं को प्राप्त होता है। रात को ९॥ बजे आप भारत के स्टेशनों से लंदन सुनते हैं। तड़के ५-६ के बीच आप अंकारा स्टेशन से अमेरिकन संवाददाताओं द्वारा भेजी गयी खबरें सुनते हैं। 'न्यूयार्क टाइम्स' देखने का चाहे आपको जीवन भर में एक बार भी सुअवसर न आवे, पर उसमें छपनेवाली अंकारा की खबरें आप प्रकाशन के कई घंटे पहले ही सुन लेते हैं।

लड़ाई के इस जमाने में शत्रु-देशों में जो बेतार की लड़ाई होती है उसे सुनने-समझने का आनन्द तो कुछ और ही है। कहते हैं कि जर्मनी ने फ्रांस को ताकत नहीं, सिर्फ प्रचार की लड़ाई से जीता। प्रचार की शक्ति का अन्दाजा आप इसी से लगा सकते हैं। जर्मन रेडियो जब आपके देशों की खबरें तोड़-मरोड़ कर देता है तो आपके होठों पर झट मुस्कराहट दौड़ जाती है। राजगोपालाचारी को पलचरी के राजा कहना; जबलपुर के उपद्रव में एक आदमी घायल हुआ हो तो सौ मरे बताना; बम्बई के साम्प्रदायिक उपद्रव को अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह बताना; ये सब बातें खूसट से भी खूसट व्यक्ति को एक बार हँसा ही देंगी।

रेडियो का विज्ञान

आधुनिक विज्ञान से अनभिज्ञ और निरक्षर व्यक्तियों के लिए रेडियो एक आश्चर्यजनक चीज है। वे उसे भूत-विद्या समझते हैं। पहले तो दूर से इसकी आवाज सुनाई देने की प्रक्रिया ही उनकी कल्पना के परे है। पर टेलिफोन और

टेलिग्राफ का व्यापक प्रचार हो जाने के कारण अब उस विषय पर लोग अधिक सन्देह नहीं करते। उनकी दृष्टि से टेलिफोन और टेलिग्राफ में तार का उपयोग होता है यही बहुत है; भले ही ठोस तार के अन्दर से शब्द कैसे आता है इसे वे बिलकुल ही न समझते हों। पर रेडियो में तो तार का भी उपयोग नहीं होता। इसीलिए वे इसे अगर पिशाच-लीला समझें तो कोई आश्चर्य नहीं।

जब किसी क्रिया का भौतिक सिद्धान्त लोगों की समझ में आ जाता है तब उस क्रिया में उत्पन्न होनेवाली दिक्कतें, सिद्धान्त के जानने से ही, बहुत कुछ दूर की जा सकती हैं। इस पुस्तक में इसी कारण थोड़े में रेडियो-विज्ञान दिया जा रहा है। हमने यह प्रयत्न किया है कि वैज्ञानिकों के वादविवाद से अलग रहें और बहुत सरल भाषा में सारी क्रिया पाठकों को समझा दें। विज्ञान का 'क ख ग' न जानने वाला व्यक्ति भी साधारण रूप से रेडियो-विज्ञान से किस तरह परिचित हो सकता है, यही उद्देश्य सामने रखकर यह अध्याय लिखा जा रहा है।

बेतार-विद्या

बेतार-विद्या का मूल है बिना तार के ही एक जगह से दूसरी जगह ध्वनि पहुँचाना। वास्तव में जिन स्थानों का सम्बन्ध करने की इच्छा होती है उनके बीच तार का कोई सम्बन्ध नहीं रहता, पर उक्त दोनों स्थानों में अर्थात् रेडियो स्टेशन और रेडियो सेट जहाँ हो वहाँ तारों का उपयोग बहुत बड़ी लम्बाई में करना पड़ता है। अगर आपको कोई रेडियो स्टेशन देखने का अवसर मिले तो सबसे पहले आपका ध्यान वहाँ के तार आकर्षित कर लेंगे। इमारत में और इमारत के बाहर भी जहाँ कहीं आप देखेंगे तार ही तार नजर आयेंगे। आप जो रेडियो सेट बजाते हैं उसमें भी बाहर बिजली, एरियल, अर्थ आदि के तार रहते ही हैं। कभी खुला हुआ सेट देखने का मौका मिले तो आपको मालूम हो जायगा कि सेट के अन्दर महीन महीन सैकड़ों तारों का जाल-सा रहता है। इस तरह आप देखेंगे कि बेतार में भी बहुत तार लगता है। अब इसका कारण सुनिये।

टेलिफोन आप रोज ही देखते होंगे। क्या आपने कभी इस बात पर विचार किया है कि उसमें इतने दूर दूर के शब्द कैसे सुनायी देते हैं। टेलीफोन में जब कोई बोलता है तो उसके शब्द तार के जरिये दूसरी ओर नहीं जाते। हम जो बोलते हैं उसमें इतनी शक्ति नहीं रहती कि अधिक दूर तक वह सुनायी दे। ऐसा होता तो चोरों का और प्रेमी जनों का काम ही बिगड़ जाता। होता यह है कि टेलिफोन में जो शब्द बोले जाते हैं उनकी ध्वनि-शक्ति विद्युत-शक्ति में परिवर्तित की जाती है। यह विद्युत-शक्ति तार के जरिये काफी दूर दूर तक जा सकती है। टेलिफोन के दूसरे छोर पर जहाँ कोई सुन रहा हो यही विद्युत-शक्ति फिर ध्वनि-शक्ति में बदल दी जाती है और इस तरह बोलनेवाले का संदेश सुननेवाले के पास पहुँच जाता है।

ईथर

रेडियो में भी करीब करीब यही क्रिया होती है। अन्तर इतना ही है कि संदेश तार द्वारा न जाकर ईथर में लहरों द्वारा जाते हैं। वैज्ञानिकों ने माना है कि विश्व में सब जगह ईथर भरा है। विश्व में दो ही चीजें हैं,—एक पदार्थ (मैटर) और दूसरा ईथर। चाहे किसी जगह हवा न भी रहे पर ईथर सब जगह अवश्य रहेगा। इस ईथर का गुण-धर्म यह है कि इसको जरा-सा भी धक्का लगे, तो इसमें लहरें दौड़ने लगती हैं। पानी पर कंकड़ फेकने से जिस तरह चारों तरफ लहरें दौड़ती हैं, वैसे ही ईथर में भी जरा-सा धक्का लगने पर लहरें दौड़ने लगती हैं। वैज्ञानिकों ने यह माना है कि पदार्थ दो तरह के विद्युत कणों के—प्रोटोन और इलेक्ट्रोन के—संयोग से बनता है। इन इलेक्ट्रोनों की गति में अगर जरा-सा भी कम्पन होता है तो ईथर में चारों तरफ समान गति से लहरें दौड़ने लगती हैं और खूब दूर दूर तक चली जाती हैं। इलेक्ट्रोन की स्थिति पर लहरों की स्थिति अवलंबित रहती है। इन लहरों में सबसे छोटी कासमिक किरणों की लंबाई ·००००००६६ मीटर और सब से बड़ी बेतार की लहरों की लंबाई १ सेण्टीमोटर

(१ इंच = २·५४ सेन्टीमीटर) से २०००० मीटर तक हो सकती है। इनमें से कुछ लहरों का ज्ञान हमें अपनी इन्द्रियों से साधारण रूप से हो जाता है। गरमी और प्रकाश की किरणों का अनुभव हम अपनी त्वचा और आँखों से करते हैं। ईथर में सूर्य से जो लहरें चलती हैं वे हमारे पास आकर हमारी त्वचा और आँखों के इलेक्ट्रोनों को हिला देती हैं। इस तरह हमने देखा कि इलेक्ट्रोन की गति के परिवर्तन से ईथर में लहरें दौड़ती हैं और ईथर की लहरों से इलेक्ट्रोन की गति में परिवर्तन हो जाता है। याद रखना चाहिये कि सूर्य से पृथ्वी तक आने में ईथर की लहरों को ९,३०,००,००० मील का रास्ता तै करना पड़ता है। किन्तु फिर भी हम में से कुछ आदमी लू लगने से मर जाते हैं।

यह विश्व इतना बड़ा है कि इंच-फुट में इसका नाप देना संभव नहीं है। वैज्ञानिकों ने इसके लिए एक नया नाप बनाया है। प्रकाश की किरणें ईथर की लहरें ही होती हैं और इनकी गति भी अन्य ईथर की लहरों की तरह १,८६,००० मील प्रति सेकेण्ड रहती है। इस हिसाब से १ साल में प्रकाश किरण ५८,८०, ००,००,००,००० मील रास्ता तै करेगी। वैज्ञानिकों ने इस लंबाई का नाम प्रकाश-वर्ष रख दिया है। अपने इस विश्व में सब जगह ईथर भरा है और अंदाजा लगाया गया है कि विश्व का व्यास १,६८,००,००,००,००० प्रकाश वर्ष है और ईथर की लहरों की गति से उसकी परिधि का चक्कर लगाने में ५,७०,८५,७०,००, ००० से कुछ अधिक वर्ष लगेंगे।

विद्युत-चुम्बकीय लहरें

पाठकों ने समझ लिया होगा कि पदार्थ के किसी परमाणु को अगर हम देख सकते तो हमें एलेक्ट्रोन, प्रोटोन और ईथर दिखाई देता। एलेक्ट्रोन और प्रोटोन में आकर्षण रहता है। जब ये एक दूसरे से दूर रहते हैं तो उक्त आकर्षण जिस क्षेत्र में फैलता है उसे विद्युत क्षेत्र कहते हैं। जिस पदार्थ में विद्युत लहरो बहती

है उसके चारों ओर चुंबकीय क्षेत्र तैयार होता है। अगर हम दो समानांतर तार बाँध दें और उसमें क्षण-क्षण पर ताकत घटने-बढ़ने वाली बिजली दौड़ावें तो दोनों तारों के बीच विद्युत-क्षेत्र पैदा हो जायगा और दोनों तारों को जोड़नेवाले तार के चारों तरफ चुंबकीय क्षेत्र पैदा हो जायगा। अगर हम क्षण-क्षण पर बिजली बदलते हैं तो ये दोनों क्षेत्र भी क्षण-क्षण पर घटेंगे-बढ़ेंगे। और इनके घटने-बढ़ने से आसपास के ईथर में लहरें पैदा होंगी जो १,८६,००० मील या ३० करोड़ मीटर प्रति सेकेण्ड की गति से आकाश में दौड़ना शुरू करेंगी।

लहरें कैसे लौटती हैं?

अब प्रश्न यह उपस्थित हो सकता है कि अगर ईथर में ये विद्युत-चुंबकीय
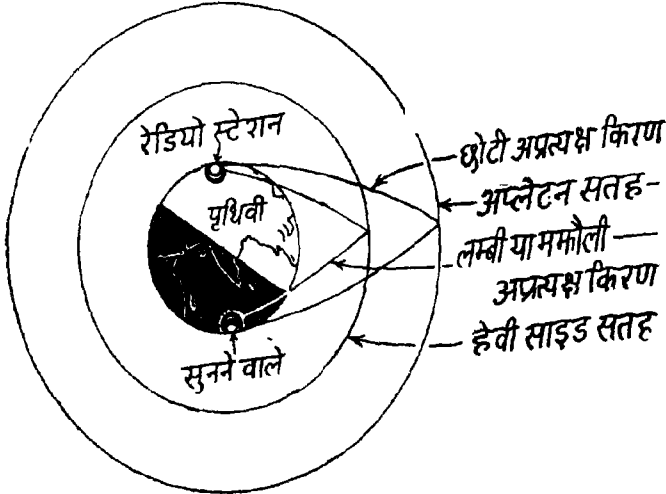
लहरें तेज गति से दौड़ना शुरू करती हैं तो वे सीधे विराट् विश्व गोल में अन्यत्र

क्यों नहीं चली जातीं, फिर पृथ्वी पर लौटती कैसे हैं। इसका जवाब वैज्ञानिकों ने इस प्रकार दिया है। पृथ्वी के चारों ओर हवा है, पर हम जैसे जैसे ऊपर जाते हैं यह हवा पतली होती जाती है। पृथ्वी से करीब १०० मील ऊँचाई तक हवा रहती है; उसके बाद नहीं। हवा पतली होते होते सूर्य से निकलने वाली कुछ ईथर की किरणों के कारण एक तह की तरह हो जाती है जिसमें १०० मीटर से अधिक लंबी बेतार की लहरें टकरा जायँ तो वे उसके पार नहीं जा पातीं, उन्हें फिर पृथ्वी की ओर लौट आना पड़ता है। जमीन पर या सामने की दीवार पर गेंद फेकने से वह जिस प्रकार लौट आता है उसी प्रकार ये लहरें उक्त सतह से टकराकर लौटती हैं। इस सतह को अँग्रेजी में हेवीसाईड लेयर या रेडियो रूफ कहते हैं। हवा की इस सतह में से ईथर की छोटी छोटी लहरें तो पार निकल जा सकती हैं, पर लहर लंबाई में जितनी ही बड़ी होती है उसे इसके पार करने में उतनी ही अधिक कठिनाई पड़ती है। प्रकाश और गरमी की ईथर की लहरें बहुत छोटी छोटी होती हैं, इसीलिए उक्त सतह उनको नहीं रोकती और हमें सूर्य का प्रकाश और गरमी मिलने में कोई बाधा नहीं पड़ती। हवा की यह हेवीसाइड लेयर नाम की जो सतह आसमान में होती है वह हमेशा और क्षण क्षण पर बदलती रहती है क्योंकि उसका अस्तित्व इलेक्ट्रोनों की शक्ति पर निर्भर रहता है और इलेक्ट्रोनों की शक्ति क्षण क्षण पर कम ज्यादा होती रहती है।

बेतार का विज्ञान इतना मनोरंजक है कि संभव है, इससे भविष्य में सारे विश्व का रहस्य सुलझ जाय। यदि विश्व के और किसी गोल पर हमारे जैसा मानव होगा और उसने भी हम जैसी विज्ञान की उन्नति कर रेडियो का विज्ञान सीख लिया होगा तो संभव है कि भविष्य में हम उस गोल के मानव से संबंध स्थापित कर सकें।

लहरों के रेडियो सेट तक पहुँचने का एक और प्रकार 'लहरों' वाले अध्याय में बाद में दिया गया है। विद्युत चुंबकीय लहरें रेडियो स्टेशन से चलकर

आकाश में होकर आपके एरियल तक कैसे पहुँचती हैं, यह आपने देखा। ये लहरें एरियल से आपके सेट में बिजली के प्रवाह के रूप में पहुँचती हैं और फिर यह बिजली की शक्ति ध्वनि की शक्ति में बदल दी जाती है और आप दूर दूर के स्थानों के कार्यक्रमों का आनन्द प्राप्त करते हैं।

'एरियल'

रेडियो सेट खरीदने के बाद सबसे पहली समस्या एरियल और अर्थ की आती है। बिना एरियल के कोई रेडियो नहीं बजता। कुछ महँगे सेट ऐसे भी बिकते हैं जिनके बारे में कहा जाता है कि उनके लिए एरियल की आवश्यकता नहीं होती। पर असल में बात यह होती है कि एरियल उन्हीं सेटों के अन्दर रहता है। बड़े एरियल के अभाव में अपने कमरे में भी तार बाँधने से एरियल बन जाता है, पर उससे आपको रेडियो का पूरा आनंद नहीं मिल सकता।

अगर यह कहा जाय कि रेडियो का ५० प्रतिशत आनंद एरियल की अच्छाई पर अवलंबित है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। एरियल लगाने के समय अगर कुछ रुपया अधिक लगाया जाय तो वह व्यर्थ नहीं जाता। रेडियो सेट की बहुत कुछ रक्षा अच्छा एरियल, लाइटनिंग अरेस्टर और अर्थ ही करते हैं। इसलिए इन चीजों की ओर जरा अधिक ध्यान देना आवश्यक है। साथ ही साथ विज्ञापनों को देखकर आधुनिक बेशकीमती एरियलों के फेर में नहीं पड़ना चाहिए।

कुछ लोगों का यह खयाल है कि मकान पर एरियल लगाने से मकान पर बिजली गिरने का खतरा बना रहता है। यह निरा भ्रम है। आकाश में जो गड़गड़ाहट होती है और बिजली उत्पन्न होती है वह अकसर इतनी शक्तिशाली नहीं होती कि आपका एरियल उसको आकर्षित कर ले। बिजली चमकने से वायुमंडल में जो विद्युत्-परिवर्तन होता है वह आपके एरियल और अर्थ में से

होकर जमीन में विलीन हो जाता है। उस समय अगर आपका रेडियो चल रहा हो तो आपको गड़गड़ाहट का केवल शब्द सुनाई देगा। सेट पर उस विद्युत्-परिवर्तन का कोई परिणाम नहीं होगा।

पर कभी कभी ऐसा भी होता है कि जो बिजली चमकती है वह बड़ी शक्तिशाली होती है और पृथ्वी उसका आकर्षण करती है। ऐसी स्थिति में आपके एरियल को उससे हानि पहुँचेगी तो मकान को भी पहुँचेगी। सिर्फ एरियल के कारण मकान को हानि नहीं पहुँचती। बिजली गिरती है तो एरियल वाला मकान देखकर नहीं गिरती। इसके विपरीत यह भी संभव है कि एरियल वाला मकान एरियल के कारण ही बिजली से बच जाय। मान लीजिये कि रात में आप रेडियो बंद करके सोये हैं। आपने अपना एरियल-अर्थ का स्विच इस तरह रख दिया है कि अब उनका रेडियो से कोई संबंध नहीं है। ऐसी स्थिति में मकान पर बिजली गिरे तो संभव है कि वह एरियल और अर्थ के रास्ते से जमीन में चली जाय। आपका मकान और रेडियो साफ बच जायगा। बड़ी बड़ी इमारतों और मीनारों पर लोहे का बड़ा तार लगा रहता है। उसका जो मतलब होता है वह थोड़े अंश में आपका एरियल-अर्थ हल कर देता है।

एरियल की ऊँचाई

एरियल की ऊँचाई जमीन से या मकान की छत पर एरियल हो तो छत से २५–३० फुट होनी चाहिये। एरियल तथा जमीन या छत के बीच में कोई बाधा, जैसे पेड़ या पेड़ की टहनियाँ, आदि न आनी चाहिये। उनसे ऊँचाई कम हो जाती है। आपका मकान अगर ४० फुट ऊँचा है और उसके गच पर आप १० फुट ऊँचा एरियल खड़ा करते हैं तो उसकी ऊँचाई ५० फुट नहीं, १० फुट ही समझी जायगी। एरियल की लंबाई करीब ४० फुट हो तो अच्छा होता है। ताँबे का तार सबसे अच्छा होता है। तार बहुत पतला कभी नहीं लगाना चाहिये।

पतले तार से बिजली के लिए अधिक रुकावट (रेजिस्टेंस) हो जाती है। बाजार में मसाला लगा हुआ बटा हुआ एरियल का खास तार बिकता है। वह खरीदा जाय तो अच्छा ही है। मसाले के कारण तार वर्षा के पानी आदि के कारण जल्दी खराब नहीं होता। पर मसाले वाले तार में एक बात की ओर ध्यान रखना आवश्यक है। जहाँ जोड़ लगाना हो वहाँ वह तार जरा सा खुरच देना पड़ता है जिससे जोड़ के बीच में मसाले से बाधा न पड़े। एरियल वाले तार में बीच में कहीं जोड़ नहीं रखना चाहिये। बाजार में १०० फुट लंबा एरियल का तार मिलता है वही इस कारण सब से अच्छा होता है। जोड़ लगाने से भय यह रहता है कि कभी जोड़ ढीला हो जाता है या जंग आदि के लगने से सम्बन्ध (कनेक्शन) नहीं रह जाता। लाइटनिंग अरेस्टर तक एरियल का एक ही तार होना चाहिये। एरियल के लिए लोग बाँसों का उपयोग करते हैं। कुछ लोग मजबूती की दृष्टि से लोहे के पतले खंभे भी लगाते हैं। पर इनमें एक दिक्कत होती है। बरसात में या हवा में नमी होने से अगर एरियल और खंभे में संयोग हो जाय तो एरियल की अच्छाई घट जाती है। पानी बिजली का प्रवाही है। तार बाँधने के लिए खंभों में ऊपर जो इनसुलेटर लगा रहता है वह बहुत ही अच्छा हो तभी यह दिक्कत नहीं होती।

बनारस जैसे शहर में पक्के महालों में बन्दरों का उपद्रव रहता है और वे एरियल के खंभे जोर जोर से हिलाते हैं। उनके लिए १० फुट ऊँचाई तक एरियल के खम्भों में कँटीला तार बाँध देना चाहिये। इससे कुछ बचाव हो जाता है। अनुभव तो यह है कि बन्दर कँटीले तारों से भी नहीं डरते!

एरियल का एक ही तार रहने से एक और लाभ होता है। एक बाँस या खम्भे के इनसुलेटर में इस तार का एक छोर बाँधना चाहिये और दूसरा छोर दूसरे इन्सुलेटर के छेद में से सिर्फ निकाल लेना चाहिये, गाँठ न बाँधनी चाहिये, और वह तार सीधे रेडियो सेटवाले कमरे में ले जाना चाहिये। इससे

लाभ यह होता है कि अगर अन्दर बाँस हिलाते हैं तो जोड़ न होने और तार ढीला होने के कारण उसके टूटने का डर कम रहता है। एरियल में दो तारों का जोड़ हो तो टूटने का डर बढ़ जाता है।

एरियल का जो तार एरियल से कमरे में रखे रेडियो सेट तक आता है उसको 'लीड-इन' तार कहते हैं। इस बात का हमेशा प्रयत्न करना चाहिये कि लीड-इन तार जहाँ तक संभव हो वहाँ तक छोटा रहे। एरियल लगाने के पहले इस बात को अच्छी तरह सोच लेना चाहिये कि जिस कमरे में रेडियो सेट रखना हो वहाँ लीड-इन तार लाने में उसे अधिक घुमाना-फिराना तो नहीं पड़ेगा। लीड इन तार जमीन में या दीवार में कहीं स्पर्श न करे इस बात की ओर भी ध्यान देना होगा। एरियल से जो लीड-इन तार रेडियो वाले कमरे में आता हो वह दीवार से ५ फुट दूर रखना चाहिये। बड़े शहरों में जहाँ बस्ती बहुत घनी रहती है और मकान पास पास रहते हैं, यह संभव नहीं है। पर जहाँ तक हो सके इस बात को भूलना न चाहिये। लीड-इन तार लाते समय एक बात का और ख्याल रखना पड़ता है। वह सड़कों या गलियों में से जाने वाले बिजली के तारों से भी दूर रहे नहीं तो कभी-कभी हिलने से वह बिजली के तार से छू जाता है। एरियल और लीड-इन का तार एक ही रखने में इस बात की आशंका नहीं रहती कि तार बीच से टूट जायगा। अन्यथा कभी जोड़ खुल कर या जोड़ की जगह से तार टूट कर बिजली के तार पर गिर जा सकता है।

लीड-इन तार जहाँ खिड़की या छेद में से होकर कमरे में आता हो वहाँ यह देख लेना चाहिए कि तार कहीं दीवार या जमीन में छूता तो नहीं है। इसके लिए सब से अच्छा तरीका यह है कि तार लकड़ी या चीनी मिट्टी की नली में से होकर कमरे में लाया जाय। चीनी मिट्टी में से होकर बिजली की धारा (करेण्ट) नहीं बह सकती। वह इन्सुलेटर है। नली लगाते समय इस बात का खयाल रखना चाहिये कि वह टेढ़ी हो यानी कमरे की ओर ऊँची और

बाहर की ओर नीची। ऐसा इसलिए किया जाता है कि बरसात के दिनों में
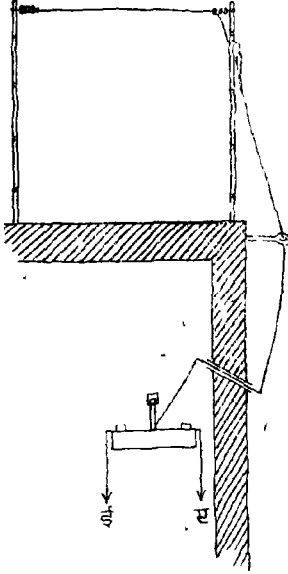
नली पर पानी पड़ने की सम्भावना रहती है और नली अगर कमरे की ओर नीची होती है तो पानी उसमें से होकर अन्दर आ जाता है। पानी बिजली का प्रवाही है, इसलिए उसके द्वारा तार का जमीन से सम्बन्ध हो जायगा। लीड-इन तार किस तरह कमरे में लाना चाहिये यह साथ वाले चित्र में दिखाया गया है।

एरियल के बारे में दो बातें रह गयीं। एक तो यह कि एरियल का तार बिजली के तार के समानांतर न हो। दूसरे यह कि रबर या कपड़े से ढका ताँबे का जो तार बाजार में मिलता है उससे भी एरियल का काम लिया जा सकता है। कुछ लोगों का खयाल है कि एरियल का तार खुला रहना चाहिये। पर ऐसी कोई बात नहीं है।

'अर्थ'

'अर्थ' का तार लगाना रेडियो की रक्षा की दृष्टि से आवश्यक है। यह सच है कि बिना 'अर्थ' के भी रेडियो बजता है, पर सुरक्षा के लिए 'अर्थ' के तार को भी एरियल के तार के समान ही महत्त्व देना चाहिये। एरियल का तार लगाते समय जिन बातों का खयाल करना पड़ता है करीब करीब उन्हीं बातों का खयाल 'अर्थ' का तार लगाते समय भी करना पड़ता है। पहली बात यह देखनी चाहिये कि अर्थ का तार पतला न हो और उसकी लंबाई कम से कम

रहे। उसे घर भर में घुमा-घुमा कर जमीन में न ले जाना पड़े। अर्थ के तार का जमीन से सम्बन्ध दो तरह से किया जा सकता है। एक तो 'अर्थ' का तार पानी के पाइप में बाँध कर किया जा सकता है। पानी का पाइप जमीन के अन्दर से जाता ही है। पाइप में तार बाँधते समय यह देख लेना चाहिये कि जहाँ तार बाँधा गया है वहाँ पाइप साफ है या नहीं। न हो तो बालू कागज या रेती से वह जगह साफ कर लेनी चाहिये। तार और पाइप का जोड़ पक्का है या नहीं, यह भी देख लेना चाहिये। पाइप में 'अर्थ' का तार बाँधना संभव न हो तो ३-४ फुट गहरा गढ़ा जमीन में खोद कर उसमें अर्थ का तार गाड़ देना चाहिये। अर्थ का तार खुला रहे तो कोई हर्ज नहीं है। अर्थ के तार में भी जोड़ नहीं लगाना चाहिये; जहाँ तक संभव हो एक ही तार रखना चाहिये। कुछ लोग यह समझते हैं कि फूल के गमले में अर्थ का तार डाल देने से जमीन में संबंध हो जाता है। पर यह ठीक नहीं है।

हर दो महीने पर यह देख लेना चाहिये कि अर्थ के तार में सब कनेक्शन ठीक तो हैं, तार में जंग तो नहीं लगा है। हम पहले ही बता चुके हैं कि रेडियो की अच्छाई ५० प्रतिशत अच्छे एरियल-अर्थ पर निर्भर करती है। अकसर देखा गया है कि जब रेडियो में कुछ खराबी आ जाती है और दूकानदार या मेकैनिक बुलाया जाता है तो सबसे पहले वह एरियल और अर्थ को देखता है। हमारा खयाल है कि अधिकतर एरियल या अर्थ की खराबी के कारण ही रेडियो के मालिकों को दूकानदारों का दरवाजा खटखटाना पड़ता है। इसीलिए एरियल-अर्थ को बीच बीच में जाँचते रहना चाहिये। रेडियो में कोई खराबी मालूम होती हो या आवाज धीमी हो गयी जान पड़े तो मेकैनिक को बुलाने या रेडियो को खोलने के पहले एरियल-अर्थ तथा रेडियो सेट में हुए उनके कनेक्शन देख लेना चाहिये। हमारा विश्वास है कि ऐसी १०० दिक्कतों में से ८० दिक्कतें एरियल-अर्थ दुरुस्त करने से दूर हो जाती हैं।

अर्थ और एरियल के तारों में गड़बड़ी न हो जाय इसलिए दोनों में अलग अलग रंग के प्लग लगाने चाहिये। लाइटनिंग अरेस्टर के पास और सेट में लगाने के लिए प्लगों की जरूरत होती है। अक्सर एरियल के लिए लाल या सफेद और अर्थ के लिए काले प्लगों को इस्तेमाल करते हैं। इसके लगाने से यह गड़बड़ी नहीं होती कि अर्थ का प्लग एरियल के छेद में लगा दिया और रेडियो बजाना शुरू किया और रेडियो न बजे तो दूकानदार को गालियाँ देना शुरू किया।

अब एरियल-अर्थ को छोड़ कर हम उस कमरे में आते हैं जहाँ रेडियो सेट रखा जाता है।

लाइटनिंग अरेस्टर

हर एक रेडियो सेट में एरियल और अर्थ के तार जोड़ने के लिए २ छेद रहते हैं। एक के पास A और दूसरे के पास E लिखा रहता है। A का मतलब एरियल और E का अर्थ से है। जर्मनी में एरियल को एण्टेना और अर्थ को एर्डी कहते हैं जो क्रमशः A और E से ही आरंभ होते हैं। एरियल और अर्थ के तार आकर सीधे रेडियो सेट में नहीं जोड़े जाते। एरियल और अर्थ के तार पहले एक स्विच में लगाये जाते हैं और उस स्विच में से अलग तार निकाल कर रेडियो में जोड़े जाते हैं। 'अर्थ' की तरह लाइटनिंग अरेस्टर के बिना भी रेडियो बज सकता है पर सेट की सुरक्षा के लिये लाइटनिंग अरेस्टर लगा लेना चाहिये। लाइटनिंग अरेस्टर में स्विच भी शामिल रहता है। लाइटनिंग अरेस्टर की जरूरत आकाश की बिजली से रेडियो सेट की रक्षा करने के लिए पड़ती है। मान लीजिये कि आकाश में बादल घिरे हैं और बिजली जोर से चमक रही है। ऐसी हालत में कभी आपके एरियल में आसमान की बिजली उतर आवे तो लाइटनिंग अरेस्टर के अभाव में वह रेडियो सेट में चली जायगी और उसके छोटे छोटे तारों

को जला कर पिघला देगी और तोड़ डालेगी। आकाश की बिजली बहुत तेज हो तो भी लाइटनिग अरेस्टर लगा रहने से वह एरियल में से सीधे सेट में न जाकर अरेस्टर और अर्थ के जरिये जमीन में चली जायगी या चिनगारियों के रूप में खतम हो जायगी और आप का रेडियो सेट सुरक्षित बच जायगा। रात में सेट बन्द करने के बाद बिना एरियल-अर्थ के तार उनमें से निकाले आप चैन से सो सकेंगे; यह चिंता आप को तंग न करेगी कि आसमान में चमकने वाली बिजली मेरे सेट को तो खराब न करेगी? इसीलिए रात को सोते समय एरियल और अर्थ का संबंध कर देना ठीक होता है। इसकी व्यवस्था अलग से करने की जरूरत नहीं रहती। लाइटनिग अरेस्टर का स्विच ऐसा होता है कि उसे ऊपर उठा देने से एरियल-अर्थ का संबंध हो जाता है और एरियल-अर्थ तथा रेडियो सेट का संबंध विच्छेद हो जाता है।

स्विच 'आन'

रेडियो सेट के ए और ई का संबंध एरियल और अर्थ के साथ है। रेडियो चलते समय भी आकाश से तेज बिजली आने पर 'ल' स्थान पर चिनगारियाँ निकलेंगी और बिजली जमीन में चली जायगी।
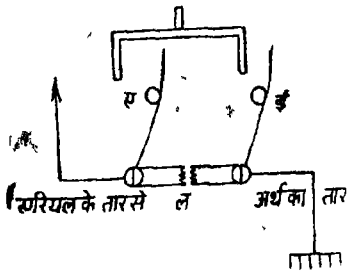
रेडियो सेट के ए और इ का संबंध अब न एरियल से रहा और न अर्थ से। आकाश से तेज बिजली आने पर 'स' के रास्ते से वह आसानी से जमीन में निकल जायगी।
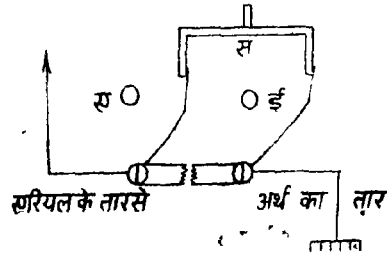
स्विच 'आफ'

आकाश में अगर बादल छाये हों और बिजली चमक रही हो तो जहाँ तक संभव हो रेडियो बन्द कर देना चाहिये। बरसात के दिनों में तो सोते समय या रेडियो बन्द करते समय लाइटनिंग अरेस्टर का स्विच 'आफ' करने में कभी भूल न करनी चाहिये। कभी कभी ऐसा होता है कि अर्थ का तार जहाँ जमीन में गड़ा रहता है वहाँ जमीन सूख जाती है। ऐसी हालत में जमीन में पानी डालते रहना चाहिये।

आवाज

रेडियो खरीदते समय कुछ लोग केवल यह देखते हैं कि इसकी आवाज कितनी अधिक तेज है। उनकी दृष्टि में जो सेट सबसे ज्यादा चिल्लाता हो वही सबसे अच्छा रहता है। यह ख्याल गलत है। सेट खरीदते समय आवाज की तेजी नहीं, उसका माधुर्य और लाउडस्पीकर की असल आवाज की जहाँ तक हो सके हूबहू नकल करने की ताकत पहले देखनी चाहिये। रेडियो बजाते समय भी आवाज उतनी ही तेज रखनी चाहिये जितनी सुननेवालों के लिए काफी हो। रास्ता चलनेवालों को यह समझाने की कोशिश न करनी चाहिए कि मेरे पास रेडियो सेट है!

रेडियो बजाते समय सुई इच्छित स्टेशन पर ठीक ठीक लगानी चाहिए। कुछ लोगों को यह आदत पड़ जाती है कि वे आवाज धीमी करने के लिए 'वालुम' वाला बटन नहीं घुमाते, सूई जरासी इधर-उधर कर देते हैं। ऐसा नहीं करना चाहिए। सुई ठीक स्टेशन पर रहनी चाहिए और आवाज घटाने बढ़ाने के लिए 'वालुम' वाला बटन काम में लाना चाहिए।

मोटर और साइकिल

रेडियो सुननेवालों को एक कठिनाई और तङ्ग करती है जो मोटर तथा साइकिल की है। रेडियो का कार्यक्रम कहीं मोटरों में दिया जाता है और

कहीं किलो और मेगा साइकिलों में। हर एक रेडियो सेटों में दोनों के निशान नहीं बने रहते। ऐसे समय में सुननेवालों को बड़ी कठिनाई का अनुभव करना पड़ता है। मीटर और साइकिल का आपस का हिसाब समझाने के पहले यह समझाना ठीक होगा कि ये माप हैं किस चीज के।

मीटर लंबाई का फ्रेंच माप है। विज्ञान की उन्नति के इतिहास में फ्रांस और ब्रिटेन में बड़ी प्रतिस्पर्धा चलती रही। दोनों देशों में अलग अलग माप रखे जाते थे। लंबाई नापने के लिए फ्रांस में मीटर था तो ब्रिटेन में इंच-फुट था। ग्राम और पौंड का भी यही इतिहास है। एक इञ्च में २·५४ सेण्टीमीटर होता है और १०० सेण्टीमीटर का १ मीटर। इस तरह १ फुट में ·३०४८, १ गज में ·९१४४ और १ मील में १६०९ मीटर होते हैं।

बेतार की लहरें विद्युत-चुंबकीय होती हैं और ईथर में चलती हैं। चलनेवाली प्रत्येक लहर की गति सेकेण्ड में १८६००० मील होती है। मीटर और इञ्च के हिसाब से १, ८६,००० मील ३०,००, ००,००० मीटर के बराबर होता है। इससे आपने मीटर का अन्दाजा कर लिया होगा। ४१ मीटर पर दिल्ली का कार्यक्रम सुनाई देगा' का मतलब यह है कि दिल्ली का कार्यक्रम लेकर जो विद्युत-चुंबकीय लहरें ईथर में दौड़ती हैं उनकी लंबाई ४१ मीटर रहती है।

अब 'साइकिल' का मतलब समझिये। रेडियो सुनने के लिए जैसे आप अपने यहाँ एरियल लगाते हैं वैसे ही कार्यक्रम भेजने के लिए हर एक रेडियो स्टेशन पर एरियल होता है। इस एरियल में बिजली अदल बदल कर दौडायी जाती है और इसीसे ईथर में लहरें पैदा की जाती हैं। जैसे पानी में कंकड़ फेंकने से लहरें पैदा होती हैं वैसे ही स्टेशनवाले एरियल के तार में बिजली इधर से उधर अदल बदल कर और धीमी-तेज कर विद्युत-चुंबकीय लहरें ईथर में पैदा की जाती हैं। ये लहरें उस स्टेशन का कार्यक्रम अपने साथ लेकर आकाश में दौड़ती हैं और आप उनमें से चाहे जिसको अपने रेडियो सेट के जरिये अपने एरियल में पकड़ लेते

हैं। मान लीजिये कि आप ३० मीटर की लंबाई की लहरों पर अपना प्रोग्राम भेजना चाहते हैं। ये लहरें १ सेकेण्ड में ३० करोड़ मीटर दौड़ जाती हैं। यानी १ सेकेण्ड में आपको ३०-३० मीटर लंबी १ करोड़ लहरें भेजनी पड़ेंगी। १ सेकेण्ड में १ करोड़ लहरें भेजने के लिए एरियल के तार में १ सेकेण्ड में १ करोड़ बार बिजली अदलनी बदलनी पड़ेगी। एक सेकेण्ड में जितनी बार बिजली अदलनी-बदलनी पड़ती है उनको उतना ही 'साइकिल' कहते हैं। साइकिल का मतलब फेरा है। इससे अब आपने समझ लिया होगा कि १ करोड़ साइकिल ३० मीटर के बराबर होता है। अगर आप ६० मीटर की लहरों पर कार्यक्रम भेजना चाहते हैं तो आपको एरियल में ५० लाख बार बिजली बदलनी पड़ेगी। ६० मीटर ५० लाख साइकिल के बराबर हुआ। इन फेरों को अंग्रेजी में फ्रीक्वेन्सी कहते हैं। थोड़े में यह हिसाब इस प्रकार लिखा जा सकता है—

$$\text{मीटरों में लहर की लंबाई} = \frac{\text{३० करोड़}}{\text{फेरों की संख्या (साइकिल)}}$$

या

$$\text{साइकिल} = \frac{\text{३० करोड़}}{\text{मीटर}}$$

इस हिसाब के साथ एक और हिसाब याद रखना होगा। फेरे अक्सर साइ-किलों में नहीं दिये जाते, मेगा-साइकिल और किलो-साइकिलों में दिये जाते हैं। १ हजार साइकिल का १ किलो साइकिल होता है और १ हजार किलो साइकिल का १ मेगा साइकिल होता है।

१ हजार साइकिल = १ किलो-साइकिल।

१ हजार किलो-साइकिल या १० लाख साइकिल = १ मेगा-साइकिल।

इस हिसाब से आपने देख लिया होगा कि १० मेगा-साइकिल १ करोड़ साइकिल या ३० मीटर के बराबर होता है।

मेगा-साइकिल × मीटर = ३०० ।

हमारा विश्वास है कि अब आप मीटर को मेगा-साइकिलों में या मेगा-साइकिलों को मीटरों में सरलता से बदल सकते हैं। एक बात और याद रखनी चाहिए। मेगा-साइकिलों की संख्या जैसे-जैसे बढ़ेगी वैसे-वैसे मीटरों की संख्या घटेगी। क्योंकि दोनों का गुणनफल ३०० ही आना चाहिये। एक बढ़ता है तो दूसरा घटता है। इसका कारण यह है कि एक सेकेण्ड में लहर को जितना अन्तर तै करना रहता है वह कभी बदलता नहीं, अर्थात् गति नहीं बदलती लहर की लम्बाई अगर बढ़नी है तो निश्चित् समय में कम लहरें भेजनी पड़ती हैं—यानी बिजली घटाने-बढ़ाने के फेरे कम होते हैं। लहर की लंबाई घटानी हो तो फेरों की संख्या बढ़ानी पड़ती है। रोज काम आने वाले कुछ मीटरों और मेगा-साइकिलों का हिसाब नीचे दिया जाता है—

मीटर		मेगासाइकिल	मीटर		मेगासाइकिल
१३	=	२३	४१	=	७
१६	=	१९	४९	=	६
१९	=	१६	६०	=	५
२५	=	११-१२	९०	=	३
३१	=	९-१०			

छोटी, मझोली और बड़ी लहरें

दुनिया में सैकड़ों रेडियो स्टेशन हैं। हर एक स्टेशन एक निश्चित लंबाई की लहरें भेजता है। बड़े-बड़े स्टेशनों में कई लहरों पर एक ही कार्यक्रम भेजा जाता है। सुविधा के लिए लंबाई के अनुसार बेतार की लहरों के अलग अलग नाम रखे गये हैं। १ हजार मीटर और उससे अधिक लंबी लहरों को लांग वेव (लंबी लहरें) कहते हैं। १०० और १००० मीटर के बीच की

लहरों को मीडियम (मझौली) तथा १० और १०० मीटर के बीच की लहरों को शार्ट (छोटी) वेव कहते हैं। १० मीटर से छोटी लहरों का उपयोग विशेषतः टेलिविजन में किया जाता है। ऐसी लहरों को अल्ट्रा शार्ट वेव कहते हैं। १ मीटर से भी छोटी लहरों को माइक्रो किरण कहते हैं।

रेडियो बनानेवाली कंपनियाँ अकसर लंबाई के अनुसार किये गये लहरों के विभाजन का पालन नहीं करतीं। जिन्होंने कई तरह के रेडियो सेट देखे होंगे उन्हें मालूम होगा कि सुविधा के लिए शार्ट वेव के २ बैण्ड रहते हैं। एक बैण्ड में १३ से ३० या ५० मीटर तक के निशान रहते हैं और दूसरे में ३० या ५० से १५० मीटर तक। इसके ऊपर ५५० मीटर तक मीडियम वेव का बैण्ड रहता है और उसके बाद चौथा बैण्ड बड़ी लहरों के लिए रहता है। यह बात नहीं कि सभी रेडियो सेटों में एक ही तरह के बैण्ड और चिह्न हों। बहुत से सेटों में बड़ी लहरों का बैण्ड नहीं रहता। उसकी आवश्यकता भी अधिक नहीं पड़ती। जिन रेडियो सेटों में सब लहरों का कार्यक्रम सुना जा सकता है उन्हें 'आल वेव' सेट कहते हैं। रेडियो के कारखानेदार अपनी अपनी सुविधा के अनुसार लहरों को लांग, मीडियम और शार्ट में अलग अलग विभाजित करते हैं। पर यह केवल उनकी सुविधा का प्रश्न है। वैज्ञानिकों ने उनका जो विभाजन किया है वही ठीक मानना पड़ेगा।

लंबी (लांग) लहरें—	१००० मीटर से ऊपर
मझौली (मीडियम)—	१०० से १००० मीटर तक
छोटी (शार्ट)—	१० से १०० मीटर तक
अल्ट्रा शार्ट—	१ से १० मीटर तक
माइक्रो रे—	१ मीटर से छोटी

यह बात नहीं कि वैज्ञानिकों का यह निश्चय बदलता नहीं। विज्ञान की उन्नति के साथ-साथ नयी-नयी बातों का पता लगता रहता है और वैज्ञानिकों

को अपने ही निश्चय बदलने पड़ते हैं। लहरों के नामों के बारे में वैज्ञानिकों की अन्तर्राष्ट्रीय सलाहकार कमेटी ने एक और निश्चय किया है जिसे हम नीचे देते हैं। हमारे पास यह देखने का कोई साधन नहीं है कि दोनों निश्चयों में पहले कौन किया गया है। इसीलिए इस पुस्तक में हम दोनों दे रहे हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय सलाहकार कमेटी का निश्चय इस प्रकार है—

३००० मीटर और उससे अधिक—	लंबी लहरें
२०० से ३००० मीटर तक—	मझौली ,,
५० से २०० मीटर तक—	बीच की (इण्टरमीडियेट)
१० से ५० मीटर तक—	छोटी (शार्ट) लहरें

अधिकतर आल वेव रेडियो सेटों में १० से लेकर २००० मीटर तक के निशान होते हैं। रेडियो सेट इतना बड़ा नहीं होता कि एक ही लाइन में १० मीटर से लेकर २००० मीटर तक के निशान बनाये जा सकें। सब सेट १० से लेकर २००० मीटर तक के बनाये भी नहीं जाते। भारत में कोई भी स्टेशन लांग वेव पर नहीं चलता। बहुत से सेटों में १३ मीटर नहीं रहता। कुछ सेट सिर्फ मीडियम वेव सुनने के लिए ही बनाये जाते हैं। यह सब अपनी अपनी सुविधा और खर्च करने की क्षमता तथा रेडियो कंपनी के अलग-अलग मेल के सेट बनाने पर निर्भर करता है। सेट में मीटर दिखाने के लिए एक ही सुई रहती है। सुविधा के लिए मीटर की पूरी लंबाई के ३-४ हिस्से कर देते हैं। इन हिस्सों को बैण्ड कहते हैं। सुई एक ही होने के कारण बैण्ड बदलने के लिए एक बटन लगा रहता है। यह बटन धीरे-धीरे घुमाने पर बैण्ड बदलता जाता है। अकसर रेडियो में शार्ट नं १, शार्ट नं २, मीडियम और लांग ये चार बैण्ड रहते हैं। बहुत से सेटों में सेट के लाउड स्पीकर पर ही ग्रामोफोन बजाया जा सकता है। इसके लिए उसी बटन में लांग के बाद एक और जगह बदलने के लिए रहती है। रेडियो सेट पर बजनेवाले ग्रामोफोन के लिए केवल अलग

साउण्ड बक्स की आवश्यकता रहती है। इस साउण्ड बक्स में दो तार रहते हैं जिन्हें जोड़ने के लिए सेट के पीछे दो छेद रहते हैं। एक पर P और दूसरे पर U लिखा रहता है। इसका मतलब 'पिक अप' है।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लहरें

बेतार की लहरें जब किसी रेडियो स्टेशन से चलती हैं तब कुछ तो आकाश में ऊपर की ओर जाती हैं, पर कुछ जमीन की सतह के पास से भी जाती हैं। जो ऊपर से जाती हैं उन्हें तो अप्रत्यक्ष (इनडाइरेक्ट) किरण कहते हैं। जमीन के पास से जाने के कारण लहरों में की शक्ति बहुत जल्द समाप्त हो जाती है। जमीन की अपेक्षा पानी में कम शक्ति क्षय होती है। इसलिए समुद्र के किनारे के स्थानों में बहुत से स्टेशन सुनाई देते हैं।

छोटी लहरें

हेवी साइड सतह की बात हम किसी अध्याय में कह चुके हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी से १४० मील की ऊँचाई पर आसमान में एक और सतह होती है जिसे 'अप्लेटन्स लेयर' कहते हैं। यह सतह १०० मीटर से कम लंबाई की बेतार की लहरों को भी रोककर उनका पृथ्वी की ओर प्रत्यावर्तन करती है। 'अप्लेटन्स लेयर' का पता वैज्ञानिकों को बहुत बाद में लगा है। पहले समझा जाता था कि १०० मीटर से कम लंबाई की लहरों पर संदेश भेजे ही नहीं जा सकते। इसलिए वैज्ञानिकों को १०० मीटर से कम पर प्रयोग करने के लिए कहा गया। इनके प्रयोग के समय दिल्लगी यह होने लगी कि १०० मील की दूरी पर तो संदेश सुनाई न देते थे, पर इंगलैण्ड के सिग्नल आस्ट्रेलिया, दक्षिण अमेरिका आदि देशों में सुनाई देते थे और सब लोग बड़ी उलझन में पड़ जाते थे कि यह कैसे हो रहा है। इसके बाद वैज्ञानिक

आगे बढ़े और उन्होंने अप्लेटन सतह का सिद्धान्त खोज निकाला। अप्लेटन सतह हेवीसाइड सतह से ओर अधिक दूर होने के कारण लहरें प्रत्यावर्तित होकर अधिक दूर जाने लगीं। छोटी लहरें रात की अपेक्षा दिन में ज्यादा अच्छी सुनाई देती हैं। पहले हम लिख चुके हैं कि मझोली और लम्बी लहरें दिन की अपेक्षा रात में अधिक साफ सुनाई देती हैं। छोटी लहरें काफी दूर दूर तक जाती हैं, इस लिए उनमें एक और कठिनाई होती है। जब रेडियो स्टेशन पर दिन रहता है तब सुनने वाले के यहाँ रात या संध्या हो सकती है। रात में १७ मीटर से छोटी लहरें बिलकुल सुनाई नहीं देतीं। दिन में १० मीटर से छोटी लहरें नहीं सुनाई देतीं। इससे स्पष्ट है कि दिन में १० मीटर से छोटी और रात में १७ मीटर से छोटी लहरें अप्लेटन सतह के पार निकल जाती हैं, उनका पृथ्वी की ओर प्रत्यावर्तन नहीं होता। आल इण्डया रेडियो अपने शार्ट वेव के स्टेशन शाम को ६० और रात में ९० मीटर पर क्यों रखता है इसका कारण अब पाठक समझ गये होंगे। इसका कारण यही है कि लहरें दिन की अपेक्षा रात में अधिकाधिक बेकार होती जाती हैं।

वैज्ञानिकों को कभी कभी अनुभव हुआ है कि कोई संदेश एक बार सुनाई देने के १५ सेकेण्ड बाद फिर सुनाई देता है। इससे यह अनुमान लगाया जाता है कि पृथ्वी से १०,००,००० मील की ऊँचाई पर एक और सतह है जो और छोटी बेतार की लहरों का प्रत्यावर्तन करती है।

आकाश में जब बिजली चमकती है और बादल गरजता है तब सभी लंबाई की ईथर की लहरें पैदा होती है। इनमें से कुछ तो ६० हजार मीटर तक लंबी रहती हैं। परंतु छोटी लहरें बहुत कम रहती हैं इसलिए आसमान में बिजली चमकने पर छोटी लहरों के कार्यक्रम पर बहुत कम असर पड़ता है। दिन की अपेक्षा रात में और जाड़े की अपेक्षा गरमी में आकाश की बिजली का उपद्रव अधिक होता है। आकाश की बिजली के कारण लंबी लहरों के कार्यक्रम में बड़ा शोरगुल

होता है। ये लहरें अधिक दूर जाती भी नहीं, इसीलिए इनका उपयोग महत्त्व के स्टेशनों पर महत्त्व के और दूर दूर तक भेजे जानेवाले कार्यक्रमों के लिए नहीं होता। हम इसी अध्याय में पहले लिख चुके हैं कि लंबी लहरों की आवश्यकता भी नहीं रहती। इसका कारण अब पाठक समझ गये होंगे।

१४ से ५० मीटर तक के बीच शार्ट वेव का उपयोग दूर दूर तक कार्यक्रम भेजने के लिए किया जाता है। पास के लिए मझौली लहरों का ही अधिक उपयोग होता है।

रेडियो सेटों के सामने वाले डायल पर अधिकतर स्टेशनों के नाम दिये रहते हैं, पर रेडियो बजाने वालों का अनुभव यह है कि उन नामों का अधिक उपयोग नहीं होता। क्योंकि स्टेशन अपनी लहरों की लम्बाई बदलते रहते हैं। मौसिम के अनुसार लहरों की लंबाई में भी अक्सर परिवर्तन होता रहता है। जो मीटर जिस समय में अच्छे सुनाई देते हैं उनका मोटा हिसाब यहाँ दिया जा रहा है।

१३ मीटर का कार्यक्रम दो पहर के समय अच्छा सुनाई देता है। १६ या १७ मीटर तीसरे पहर से अँधेरा होने के पहले तक; १९, २० और २५ मीटर शाम से लेकर रात के पहले पहर तक; ३०-३१ मीटर रात के दूसरे पहर में और ४९-६०,९० मीटर शेष रात में अच्छे सुनाई देते हैं। मोटा हिसाब यह है कि दिन के समय कम लंबी और रात के समय ज्यादा लंबी (शार्ट) लहरें अच्छी सुनाई देती हैं। इस साधारण सिद्धान्त के साथ ही यह बात भी देख लेना चाहिये कि रेडियो ट्रांसमिटर जहाँ है वहाँ कितना बजा है और वहाँ से सुननेवाले स्थान तक पहुँचने में लहरों को कितना रास्ता सूर्य प्रकाश में तय करना पड़ता हैं।

जाड़े में रेडियो अच्छा क्यों सुनाई देता है

वैज्ञानिकों ने हिसाब लगाया है कि हेवीसाइड लेयर पृथ्वी से करीब ६० मील ऊपर आसमान में रहता है। दिन के समय सूर्य की किरणों के कारण यह

सतह कुछ और नीचे आ जाती है। इससे रात की अपेक्षा दिन में लहरों का प्रत्यावर्तन कम दूर होता है। रात के समय दूर दूर के स्टेशन भी सुनाई देते हैं इसका कारण यही है। १ हजार मीटर से अधिक लंबी लहरों के संबंध में रात और दिन में अधिक फर्क नहीं होता। गरमी में दिन बड़े और रात छोटी होती है। जाड़े में दिन छोटा और रात बड़ी होती है। इसीलिए गरमियों की अपेक्षा जाड़े में रेडियो और अधिक अच्छा बजता है।

वैज्ञानियों का कहना है कि सूर्य पर कुछ दाग दिखाई देते हैं। ११-११ वर्ष में इनका चक्र पूरा होता है। ये दाग जब बहुत अधिक होते हैं तब सूर्य से एक चुंबकीय तूफान उठता है। वह जब पृथ्वी के पास पहुँचता है तब बेतार की छोटी लहरों में बड़ी गड़बड़ी होने लगती है। १९१४ में इसी तरह के चुंबकीय तूफानों के कारण छोटी लहरों के कार्यक्रम कई बार लगातार दो-दो तीन-तीन दिनतक बिगड़ते रहे हैं।

रेडियो के विभिन्न बटन (नॉब)

रेडियो के विभिन्न बटनों का उपयोग किस तरह होता है इसे बताना भी आवश्यक है। एक बटन आवाज कम ज्यादा करने के लिए रहता है। अधिकतर सेटों में रेडियो शुरू करने का बटन भी इसी में रहता है। घड़ी के काँटे जिस तरह घूमते हैं उस तरह दाहिनी ओर घुमाने से पहले सेट शुरू होता है। इसकी निशानी यह है कि सेट के अन्दर जो बल्ब रहते हैं जल उठते हैं। बहुत से सेटों में सेट शुरू करने का स्विच अलग भी रहता है।

दूसरा बटन सुई घुमाने का रहता है। इसी में एक और छोटा बटन रहता है जो सुई बहुत धीरे-धीरे घुमाने के काम आता है। बहुत से सेटों में सुई नहीं रहती। रोशनी की एक किरण से सुई का काम लिया जाता है। बहुत पास पास के रेडियो स्टेशन पकड़ने के लिए बहुत से सेटों में बैण्डों के अलावा एक और स्केल रहता है जिसे वर्नियर कहते हैं। इससे थोड़ा थोड़ासा अन्तर भी मालूम हो जाता है।

स्विच और आवाज छोटी बड़ी करने का एक बटन, बैण्ड बदलने का एक बटन, सुई घुमाने का एक बटन, इन तीन बटनों के अतिरिक्त एक और बटन होता है। यह आवाज कड़ी करने के लिए रहता है। अंगरेजी में इसे टोन कण्ट्रोलर कहते हैं। आवाज छोटी बड़ी करनेवाले बटन को वाल्यूम कण्ट्रोलर कहते हैं।

बटनों का यह वर्णन साधारण है। हरएक कंपनी अपने अपने सेटों में कुछ अलग रखना या विशेष ढंग का हिसाब रखती है। उन सबका जानना या उसका विवरण यहाँ देना संभव नहीं है। रेडियो बजाने के लिए अधिकाधिक सहूलियत हो इसके लिए नयी नयी बातों का पता लगाया जा रहा है। बैण्ड एक्सपैण्डर का नाम कुछ लोगों ने सुना होगा। जिस मोटर पर रेडियो सुनना हो वह इससे फैलाया जाता है ताकि बहुत नजदीक नजदीक के स्टेशन भी सरलता से पकड़े जा सकें।

कुछ लोगों को यह आदत होती है कि रेडियो बजाते हुए ही वे बैण्ड बदलने का बटन घुमाते हैं। रेडियो की मशीन बड़ी नाजुक रहती है। उसमें बहुत महीन महीन तारों का जाल सा रहता है। उसके बल्ब भी बहुत नाजुक होते हैं। जरासे धक्के में मशीन खराब हो जा सकती है। इसलिए रेडियो बजते समय बैण्ड नहीं बदलना चाहिये। बैण्ड बदलना हो तो आवाज छोटी बड़ी करनेवाला बटन बंद कर देना चाहिये। रेडियो के अन्दर की बत्ती जलती रहे तो कोई हर्ज नहीं। इसके बाद बैण्ड बदलना चाहिये और फिर आवाजवाला बटन धीरे धीरे खोलना चाहिये।

इस बात का हमेशा ख्याल रखना चाहिये कि रेडियो को कभी धक्का न लगे। इसीलिए रेडियो जिस टेबुल पर रखा जाय वह लड़खड़ाने या हिलनेवाला न हो।

रेडियो टेबुल पर ही रखना चाहिये। टेबुल लकड़ी का हो और जितना बड़ा रहे उतना ही अच्छा। लकड़ी के टेबुल से आवाज अच्छी हो जाती है।

रेडियो सेट कभी दीवार से पीछे चिपका कर नहीं रखना चाहिये। रेडियो बजते समय मशीन गरम हो जाती है और उसे हवा लगना आवश्यक रहता है। इसीलिए सेट के पीछे वाले बोर्ड में या तो बड़े बड़े छेद बने रहते हैं या कुछ जगह

खुली छोड़ दी जाती है। कुछ लोग सुरक्षा के ख्याल से सेट पर कपड़े की खोली चढ़ा देते हैं। खोली चढ़ानेवालों को चाहिये कि सेट बजते समय खोली निकाल दिया करें और बंद होने के १०-१५ मिनट बाद फिर चढ़ा दिया करें। खोली चढ़ो रखकर सेट कभी नहीं बजाना चाहिये। इससे सेट बहुत जल्दी गरम हो जाता है।

स्विच 'आन' करते ही सेट बजना शुरू नहीं होता। सेट के अंदर जो बड़े बड़े बल्ब (वाल्व या ट्यूब) होते हैं इन्हें गरम होने में करीब आधे मिनट का समय लगता है। जिस शहर में डी. सी करेण्ट हो और स्विच 'आन' करने के आधा मिनट बाद भी सेट काम करना शुरू न करे तो स्विच ऑफ कर बिजलीवाला प्लग घुमाकर लगाना चाहिये।

हरएक शहर में बिजली की शक्ति (वोल्टेज) एक सी नहीं रहती। इसके लिए रेडियो सेट में एक स्क्रू रहता है जो प्राप्य वोल्टेज के अनुसार अलग अलग स्थानों में कस दिया जाता है। वोल्टेज बिजली देनेवाली कंपनी से मालूम हो सकता है या मीटर से जाना जा सकता है। प्राय: २०० से लेकर २५० वोल्टेज तक बिजली दी जाती है।

बैटरी सेट

उद्योग-व्यवसाय के क्षेत्र में भारतवर्ष अन्य देशों से अभी बहुत पिछड़ा हुआ है। इस कारण यहाँ बड़े बड़े शहरों को छोड़कर अन्यत्र बिजली का प्रबन्ध नहीं है। यह स्थिति अब धीरे धीरे सुधर रही है। फिर भी देहातों तक बिजली की पहुँच होने में कई वर्ष लग सकते हैं जिन स्थानोंपर बिजली घर न हो वहाँ बैटरी से भी रेडियो सेट चलाये जा सकते हैं। पर बैटरी से चलनेवाले रेडियो यंत्रों के वाल्व बिजली से चलनेवाले रेडियो यंत्रों के वाल्व से भिन्न रहते हैं। रेडियो खरीदते समय पहले इस बात को सोच लेना चाहिये कि जिस स्थान पर उसका उप-

योग करना है वहाँ बिजली है या नहीं। न हो तो बैटरी से चलनेवाला सेट खरीदना चाहिये।

बैटरीवाले सेटों में बिजलीवाले यन्त्रों की अपेक्षा अधिक असुविधा होती है। बैटरी को बार बार चार्ज करना पड़ता है। पर जहां बिजली नहीं रहती वहाँ अनिवार्यतः इनका उपयोग करना ही पड़ता है। बिजली के संबन्ध में भी एक बात बड़े महत्व की है। इस बात का पता रहना जरूरी है कि उक्त स्थान पर बिजली ए. सी. है या डी. सी.। जो सेट ए.सी.डी.सी. दोनों पर चलते हैं उनमें तो किसी प्रकार की दिक्कत नहीं रहती, पर केवल एक ए. सी. या एक डी. सी. मेल की बिजली की करेंट से चलनेवाले सेट हों तो उनको करेण्ट के अनुरूप बनाना पड़ता है। यह काम रेडियो का दुकानदार ही कर सकता है, इसलिए इन सब बातों पर यन्त्र खरीदने के पहले विचार कर लेना आवश्यक है।

कार्यक्रम में बाधा (इन्टरफीयरेन्स, डिस्टर्बेन्स)

भारत में रेडियो ब्राडकास्टिंग अभी बाल्यावस्था में है, इसलिए कार्यक्रमों में बाधा (इन्टरफियरेन्स) डालनेवालों के खिलाफ यहां अभी कोई कानूनी व्यवस्था नहीं है। विदेशों में जोर जोर से रेडियो बजाने अथवा रात के कुछ निश्चित समय में जोर से रेडियो बजाने आदि पर भी प्रतिबंध लगाये गये हैं। पर इससे अधिक कठिनाई बिजली की मशीनों से पैदा होती है। भारत में तो सबसे बड़ी दिक्कत डी. सी. करेण्ट के कारण होती है। इस देश के अधिकांश बड़े शहर में बिजली की डी. सी. करेण्ट है। डी. सी. बिजली पैदा करने में जो मोटर इस्तेमाल करनी पड़ती है उससे आसमान में ईथर को भारी तूफान पैदा होता है और रेडियो के कार्यक्रम में बाधा पड़ती है। इसके कारण बिजली-घरों के पास रहने वालों को रेडियो सुनना दुश्वार हो जाता है। कार्यक्रम में बाधा कैसे पड़ती है, इसे समझ लेना अच्छा होगा। बिजली की

मोटरें जब चलती हैं, तो उनमें चिनगारियाँ निकलती हैं। इन चिनगारियों से ईथर में तूफान उठते हैं और वे रेडियो की लहरों के साथ कार्यक्रम में आ जाते हैं। इन तूफानों की शक्ति अधिक नहीं रहती इसलिए ये जहाँ उठते हैं उनसे दूर रहनेवालों को इनसे कोई दिक्कत नहीं होती। कुछ लोगों का ख्याल है कि रेडियो के आस पास बड़ी आवाज होने से वह रेडियो में आ जाती है। पर ऐसी बात नहीं है। रेडियों में आवाज की लहरें नहीं, बल्कि ईथर की लहरें ही बाधा डाल सकती हैं। आपके रेडियो सेट के पास कोई तोप छूटे तब भी उसका परिणाम आपके रेडियो सेट पर नहीं पड़ेगा। पर जिस कमरे में रेडियो हो उस कमरे में आप अगर कंघी से अपने बाल सवारें और उसके घर्षण से बिजली पैदा हो तो उसका असर रेडियो में आ जायगा। रेडियोवाले कमरे में तार पर कोई धोती सुखाने के लिए आपने डाली हो और सूखने के बाद आप उसके तह जोर से अलग करें तो अलग होते समय दोनों तहों के बीच में बहुत बारीक चिनगारियाँ निकल जाती हैं। इस से रेडियो में आवाज हो सकती है।

इससे यह बात समझ में आ गयी होगी कि रेडियो के कार्यक्रम में बाधा कैसे पड़ती है। मकान में बिजली के पंखे हों या बिजली से चलनेवाली और मशीनें हों तो कार्यक्रम में बाधा पड़ती है। इसके लिए पुराने पंखे या बिगड़े हुए पंखों को इस्तेमाल नहीं करना चाहिये। बिजली की मोटर में कन्डेन्सर बैठा लेना चाहिये इससे चिनगारियाँ निकलना बन्द हो जाता है।

रेडियो वालों के आस पास जो लोग रहते हैं उनसे अकसर रेडियो के कार्यक्रम में बाधा पड़ती है। आपका कोई पड़ोसी पुराने और रद्दी बिजली के पंखे का गरमी में उपयोग करता है तो उससे आप के रेडियो में शोर होगा और उस के कारण आपको कोई कार्यक्रम ठीक तरह सुनाई न देगा। अगर कोई पड़ोसी अपने मकान में बार बार स्विच दबावे तो आप के रेडियो में बार बार आवाज होगी। लिफ्ट, बस, ट्राम, पंखे, ठंडा रखनेवाली मशीनें, बिजली की मोटरें, नियन रोशनी के विज्ञा

पन या दुकानों के नामों के बोर्ड, बिजली घर की कुछ मशीनें, बिजली से रोग अच्छा करनेवाली मशीनें इन सबसे रेडियो के कार्यक्रम में बाधा पड़ती है। भारत में बिजली के पंखों के कारण गरमी के दिनों में रेडियो सुनना असम्भवसा हो जाता है। इन सब दिक्कतों को दूर करने के लिए दो उपाय हैं। एक तो शिक्षा और दूसरे सरकारी कानून द्वारा दंड की व्यवस्था। भारत में इस सम्बन्ध में अभी कोई सरकारी कानून नहीं है, पर रेडियो का प्रचार अब व्यापक हो रहा है और कोई न कोई कानून सरकार को अवश्य बनाना पड़ेगा। पहला उपाय शिक्षा का है और मेरी इस पुस्तक से यदि कुछ लोग शिक्षा लेंगे और गर्मियों में अपने मकान में खराब पंखे न चलायेंगे तो उनके पड़ोसी रेडियो सुननेवाले उनको अनेकानेक धन्यवाद देंगे और इस पुस्तक का एक उद्देश्य भी सफल हो जायगा।

रेडियो के कार्यक्रम में और भी कई तरह से बाधा उत्पन्न होती है। एक ही मकान में यदि दो एरियल पास-पास हों और उनसे संबंधित दोनों रेडियो सेट एक साथ चलाये जायँ तो एरियलों के कारण परस्पर गड़बड़ी होती है। एक ही एरियल द्वारा दो सेट चलने से तो कार्यक्रम कभी कभी एकदम चौपट हो जाता है। अगर आस पास में कोई सिनेमा घर हो तो उसकी मशीन से भी कार्यक्रम में बाधा पड़ती है। एरियल के पास टेलिफोन या टेलिग्राफ का तार भी कार्यक्रम में कभी कभी बाधा उत्पन्न करता है।

लड़ाई के दिनों में तो दुश्मन के रेडियो कार्यक्रम में जानबूझ कर बाधा डाली जाती है। वर्तमान युद्ध आरंभ हुआ तभी से बरलिन के रेडियो पर जो कूं कूं कूं की आवाज होती रही वह इसी कारण। इसका एक ही उपाय है कि कार्यक्रम की आवाज बाधा की आवाज से तेज की जाय। इसी उपाय के कारण बरलिन रेडियो भारत में बाधा होते हुए भी साफ सुनाई देता था।

रूस का युद्ध आरंभ होने के बाद रेडियो में बाधा डालने का एक यह उपाय भी उपयोग में लाया गया कि जिस मीटर पर शत्रु का स्टेशन चलता

हो उसी मीटर पर खुद ही बोला जाय। यह प्रयोग रूस ने जर्मनी के खिलाफ और जर्मनी ने बी. बी. सी (लंदन रेडियो) के खिलाफ कुछ दिनों तक किया था।

रेडियो यंत्र में खराबी

रेडियो यंत्र में जब खराबी आ जाय तब पहले नीचे लिखी हुई बात को देख लेना चाहिये। कभी २ ऐसा होता है कि मामूली सी बात रहती है और उसे देखे बिना ही रेडियो का मालिक दूकानदार या मैकेनिक को बुला लाता है और दोनों को व्यर्थ परेशानी होती है।

कभी २ सेट बजाना शुरू करते ही उसमें से घों घों आवाज आना शुरू होता है और कार्यक्रम सुनाई नहीं देता। इसके लिए पहले बिजलीवाला मेन प्लग उलट देना चाहिये। इस पर भी अगर खराबी दूर न हो तो दूसरी बातें देखनी चाहिये।

दूसरी बातों में यह देखना चाहिये कि एरियल और अर्थ के कनेक्शन ठीक हैं या नहीं। रेडियो के अंदर लाउड स्पीकर में जो कनेक्शन रहता है वह खुला है या ठीक है। वाल्व के ऊपर कनेक्शन करनेवाले तार ढीले तो नहीं हो गये हैं, वाल्व अपनी जगहों पर ठीक बैठे हैं या ढीले हैं, आदि। जब सेट में कार्यक्रम धीरे २ सुनाई दे रहा हो पर कुछ खराबी आयी हुई भी मालूम दे तो ऊपर ऊपर के सब कनेक्शन देख लेने चाहिये। कनेक्शन कभी जरासे ढीले हो जाते हैं और इसीसे खराबी मालूम होती है। इसीलिए रेडियो में हर स्थान पर टाँका लगाकर तार की पक्की जोड़ाई की जाती है। तार ऐंठकर जोड़ने से ठीक २ काम नहीं चलता। जब यह मालूम हो जाय कि उपर्युक्त कोई खराबी नहीं है और फिर भी रेडियो ठीक नहीं बज रहा है तब उसे दूकानदार या मैकेनिक के पास भेजना चाहिये। साल डेढ़ साल के बाद रेडियो के वाल्व बदलवा लेने चाहियें। अंदर की सफाई भी करा लेनी चाहिये। बाहर की सफाई

हर हफ्ते अपने हाथ से की जाय तो अच्छा है। पर सेट खोलते समय इस बात को बहुत अच्छी तरह देख और समझ लेना चाहिये कि हम जो चीज खोल रहे हैं वह कैसे बैठाई हुई है जिससे सफाई करने के बाद वह फिर ठीक से बैठाई जा सके। खुला रेडियो फिर ठीक करते समय यह देख लेना चाहिये कि प्रत्येक स्क्रू ठीक २ कसा गया है या नहीं। अगर ठीक न कसा गया होगा तो आवाज में खराबी आ जायगी। रेडियो के पीछे वाला बोर्ड अगर ढीला बैठा हो तो भी आवाज खराब होती है, क्योंकि किसी आवाज से सितार के तार जिस तरह बज उठते हैं उसी तरह रेडियो के आवाज से पीछे वाला ढीला बोर्ड भी हिल उठता है और अपनी आवाज देता है जिससे रेडियो कार्यक्रम की आवाज खराब सुनाई देती है।

लाइसेन्स

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को छोड़कर दुनिया के प्रायः अन्य सब देशों में बेतार पर सरकारी नियन्त्रण है। रेडियो सेट रखने के लिए सरकारी लाइसेन्स की फीस विभिन्न देशों में विभिन्न है। ब्रिटिश भारत में रेडियो विभाग सरकार के डाक और तार विभाग के अन्तर्गत है और रेडियो सेट रखने के लिए यहाँ भी सरकारी लाइसेन्स प्राप्त करना पड़ता है। इसके लिए १०) हर साल देना पड़ता है। डाकखानों में लाइसेन्स के फार्म मिलते हैं जिनमें सब आवश्यक बातें दर्ज करने और १०) का टिकट चिपकाने पर लाइसेंस मिलता है। यह १२ महीने के लिए रहता है। जिस महीने में लाइसेंस लिया गया हो उसकी पहली तारीख से महीना गिना जाता है। इस तरह किसी महीने के आखिरी सप्ताह में लाइसेन्स लेनेवाला उसका उपयोग पहले साल में ११ महीने ही कर पाता है। एक लाइसेन्स से एक मकान के किसी परिवार में चाहे जितने रेडियो सेट रखे जा सकते हैं पर लाइसेन्स अगर उठौवा (पोर्टेबल) सेट के लिए हो तो सिर्फ एक ही सेट रखा जा सकता है। होटेल, आहारगृह या सार्वजनिक स्थानों में रेडियो सेट रखनेवालों को

२५) वाला लाइसेन्स लेना पड़ता है। और भी २-३ तरह के लाइसेन्स रहते हैं, पर जन-साधारण से उसका कोई मतलब नहीं रहता इसलिए उनका जिक्र यहाँ नहीं किया गया है। जिन्हें जानने की इच्छा हो उन्हें इण्डियन टेलिग्राफ एक्ट १८८५ देखना चाहिए। बिना लाइसेन्स का रेडियो सेट पकड़े जाने पर मालिक को सजा होती है। लाइसेंस की मीयाद खतम होने के बाद १४ दिन के अंदर ही दूसरा लाइसेन्स ले लेना चाहिये। बिना लाइसेन्स के रेडियो रखने पर कानून में भारी सजा रक्खी गयी है। १९३३ के इण्डियन टेलिग्राफ एक्ट में भी बिना लाइसेन्स के रेडियो रखनेवाले को सजा देने की बात कही गयी है। भारत में रेडियो पर आनेवाली खबरें छापना मना है। लड़ाई शुरू होने के बाद भारत सरकार ने सार्वजनिक स्थानों में शत्रु-देशों से आनेवाली खबरें सुनाना भी मना कर दिया है। लाइसेन्स अगर खो जाय तो २) देने पर नया लाइसेन्स मिलता है। कभी कभी लोग रेडियो खरीदने के पहले दूकानदार से परीक्षा के तौर पर सेट बजाने के लिए घर लाते हैं। परीक्षा (डिमान्स्ट्रेशन) के लिए ऐसे सेट १५ दिन से अधिक घर पर नहीं रखे जा सकते। इनके लिए खरीदार को या मकान मालिक को लाइसेन्स नहीं लेना पड़ता। डेमान्स्ट्रेशन के रेडियो के लिए दूकानदार को लाइसेन्स लेना पड़ता है जो ५) में मिलता है। यह लाइसेन्स उस रेडियो सेट के साथ रहना चाहिये।

रेडियो पर खबरें

रेडियो मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन क्यों है इसे बताते हुए हमने पिछले किसी पृष्ठ पर कई कारण दिये हैं। जो लोग रेडियो पर विभिन्न देशों से समाचार सुनते हैं वे यह जानते हैं कि एक ही समाचार विभिन्न देशों द्वारा किस ढंग से और किस समय प्रकाशित किया जाता है। ऐसे समाचारों को ध्यान से सुनना

बड़ा मनोरंजक होता है। शत्रु देशों में रेडियो पर जो लड़ाई हो जाती है उसे हम ईथर-युद्ध कह सकते हैं। इस ईथर युद्ध का सतत निरीक्षण मनोरंजन के साथ साथ ज्ञानवर्द्धन भी करता है।

खबरों के संबन्ध में यहाँ अगर कुछ टीका-टिप्पणी की जाय तो वह खबर सुननेवालों के लिए लाभदायक ही साबित होगी। दुनिया भर में अगर सबसे पहले किसी घटना की कोई खबर देता है तो वह लंदन (बी. बी. सी.) रेडियो है। लंदन रेडियो इस तत्परता के लिए प्रसिद्ध है। उसे जो कुछ प्रचार करना होगा वह वहाँ से सुनायी जानेवाली खबरों की भाषा, ढंग और टीकाओं में होगा। युद्धकाल में बरलिन रेडियो अपनी गरज कर बोलने की विशेषता के लिए प्रसिद्ध था। पराजित मुसोलिनी की तरह इटली का रेडियो भी धीरे धीरे बोलता था। इस पर हिन्दुस्तानी में समाचार सुनानेवाले के मुँह में तो इतनी गालियाँ भरी रहती थीं कि जी उकता जाता था। मास्को के पास जर्मनों के पहुँचने के समय तक मास्को रेडियो की गर्जना और सब रेडियो से तेज थी। खबरों के संबंध में तो दिल्ली का रेडियो लंदन का हिज मास्टर्स वायस बन जाता है। आजकल दिल्ली से सुदूर पूर्व और मध्यपूर्व के लिए विशेष कार्यक्रम होते हैं।

समय का अंतर

रेडियो पर विभिन्न देशों के समाचार सुननेवालों को विभिन्न देशों के समयों का अंतर जानना अत्यावश्यक है। इस अध्याय में इस अंतर का हिसाब तथा अंतर पड़ने का कारण समझाने का प्रयत्न किया गया है। यह जानकारी उपयोगी तो है ही, मनोरंजक भी है।

विभिन्न स्थानों के समय में अंतर पड़ने का कारण यह है कि पृथ्वी २४ घंटे में अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा करती है, इससे विभिन्न स्थानों में सूर्योदय विभिन्न

समयों में होता है। अपने वृत्त में सूर्य जब जिस स्थान पर ठीक सिर के ऊपर होता है तब उस स्थान में दिन का १२ बजता है। पृथ्वी की इसी गति के कारण विभिन्न स्थानों में किसी एक समय में दिन के विभिन्न भाग होते हैं। जब भारत में दिन रहता है तब अमरीका में रात रहती है और जब अमरीका में रात रहती है तब इंग्लैण्ड में सबेरा होता है। किसी एक समय में पृथ्वी के आधे हिस्से में अंधकार और आधे में सूर्य प्रकाश रहता है। पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है। इसी कारण सूर्य पूर्व से पश्चिम को ओर जाता हुआ मालूम पड़ता है। इससे यह स्पष्ट है कि जो देश जितना अधिक पूरब की ओर होगा उतने ही पहले वहाँ सूर्योदय होगा। जापान भारतवर्ष के पूर्व में है और ब्रिटेन भारतवर्ष के पश्चिम में है। इसलिए भारत में जिस समय सूर्योदय होता है उस समय जापान में काफी दिन चढ़ आता है पर ब्रिटेन में आधी रात बाकी रहती है। काशी में जिस समय सूर्योदय होता है उसके २२ मिनट पहले ही कलकत्ते में सूर्योदय हो जाता है, पर बम्बई में सूर्योदय होने में ४१ मिनट बाकी रहते हैं।

किंतु समय का हिसाब अगर इस तरह रखा जाय तो हमें अपनी यात्रा में प्रत्येक स्टेशन पर अपनी घड़ी आगे पीछे करनी पड़ेगी। अगर हम पूर्व की ओर यात्रा कर रहे हों तो हमें अपनी घड़ी बराबर तेज करनी पड़ेगी और पश्चिम की ओर यात्रा करते हों तो धीमी। पर भारतवर्ष में ऐसा नहीं करना पड़ता। यदि ऐसा होता तो बड़ी दिक्कत होती और चारों ओर गड़बड़ी तथा अव्यवस्था फैल जाती। एक घड़ी का दूसरी घड़ी से मेल न खाता। ऐसी गड़बड़ी न हो, इसलिए भारत भर के लिए एक समय निश्चित कर दिया गया है। इस को इण्डियन स्टैण्डर्ड टाइम कहते हैं। इसी स्टैण्डर्ड टाइम के कारण भारत में हम कहीं भी चले जायं हमें अपनी घड़ी की सूई नहीं घुमानी पड़ती। पर कुछ स्थानों में स्थानीय समय (लोकल टाइम) भी चलता है। जो पाठक कलकत्ते गये होगें उन्हें इसका अनुभव होगा। कलकत्ता जाने पर लोगों को अपनी घड़ियाँ २४

मिनट आगे करनी पड़ती है। इण्डियन स्टैण्डर्ड टाइम और कलकत्ता लोकल टाइम में २४ मिनटका अंतर है।

यह अंतर किस हिसाब से निकाला जाता है इसे समझना मुश्किल नहीं है। पृथ्वी चौबीस घंटे में अपनी धुरी पर पूरा एक चक्कर लगाती है। वैज्ञानिकों ने अपनी सुविधा के लिए पृथ्वी को ३६० हिस्सों में विभाजित कर लिया है। हर एक हिस्से को अंश (डिग्री) कहते हैं। इस विभाजनकी रेखाओं को अंगरेजी में लांगीट्यूड और हिन्दी में देशांतर कहते हैं। इस हिसाब से पृथ्वी को ३६० अंश घूमने में २४ घंटे लगते हैं। यानी १ घंटे में पृथ्वी १५ अंश घूमती है और १ अंश घूमने में उसे ४ मिनट लगते हैं। इस हिसाब से एक स्थान अगर दूसरे स्थान से २० अंश पूरब में है तो उस दूसरे स्थान में पहले स्थान से २०×४=८० मिनट बाद सूर्योदय होगा।

देशान्तर की रेखाएँ कल्पित ही रहती हैं, पृथ्वी पर खींची नहीं रहती। वैज्ञानिकों ने अपनी सुविधा के लिए ग्रीनिच का देशान्तर० मान लिया है। ग्रीनिच स्थान लंदन के पास ही है। यहाँ पर बड़ी भारी वेधशाला है। यहाँ से रोज दुनिया भर को समय बताया जाता है। लंदन रेडियो हर १५ मिनट पर या तो बिग बेन घड़ी का गजर या ग्रीनिच समय की सूचना सुनाता रहता है। यह मान लिया गया है कि देशांतर की रेखा ग्रीनिच स्थान पर से होकर गुजरती है। यहां से पूर्वी गोलार्द्ध १८० अंश में और पश्चिमी गोलार्द्ध १८० अंश में बाँट दिया गया है। काशी का देशांतर ८३° पूर्व और टोकियो का १४०° पूर्व है। १८०° पूर्व और १८०° पश्चिम की रेखा एक ही है। यह रेखा प्रशांत सागर में ओशन, गिलबर्ट, फीजी आदि टापुओं और न्यूजीलैण्ड के पास से होकर जाती है। जब कोई जहाज पूर्व से पश्चिम की ओर आता है और इस रेखा से गुजरता है तो जहाज पर के कैलेण्डरों में १ तारीख आगे बढ़ा दी जाती है। इसी तरह इस रेखा

को पश्चिम की ओर से पूर्व की ओर पार करनेवाले जहाजों को अपनी तारीख ४८ घंटे में एक ही बार बदलनी पड़ती है।

समय की गड़बड़ी न हो इसलिए वैज्ञानिकों ने पृथ्वी को २४ हिस्सों में बाँट दिया है। एक-एक हिस्से में १५-१५ अंश देशांतर पड़ता है। और उनमें अलग-अलग स्टैण्डर्ड टाइम रखा गया है। हर एक हिस्से के स्टैण्डर्ड टाइम में १-१ घंटे का अंतर रहता है।

ब्रिटेन का समय

ब्रिटेन में ग्रीनिच मीन समय (जी. एम. टी.) चलता है। सन् १९०७ में श्री विलियम विलेट नामक एक सज्जन ने यह आन्दोलन चलाया कि गरमियों में शाम को मनोविनोद के लिए और समय मिले इस लिये घड़ियां आगे कर दी जाया करें। इस आंदोलन की ओर शांति काल में तो सरकार का ध्यान नहीं गया पर गत महायुद्ध शुरू होने के बाद शाम को दफ्तर के कर्मचारियों को जल्दी घर जाने को मिले, ईंधन (तेल, लकड़ी, कोयला) पर कम खर्च हो और सबेरे का एक घंटे का समय और उपयोग में लाया जा सके इसलिए मई से अक्टूबर तक घड़ियाँ १ घंटा आगे कर दी जाती रहीं। इसको ब्रिटिश समर टाइम (बी. एम. टी.) कहते हैं। यह ग्रीनिच मीन टाइम से १ घंटा आगे रहता है। यूरोप के अन्य देशों की घड़ियां भी इसी तरह एक-एक घंटा आगे कर दी गयी थीं। सन् १९२५ में ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने दिन का समय बचाने वाला बिल (डे-लाइट सेविंग) कानून बना डाला। इसके अनुसार प्रति वर्ष अप्रैल के तीसरे शनिवार के बाद के दिन यानि शनि और रविवार के बीच की रात को २ बजे घड़ियाँ एक घंटा आगे कर दी जाती हैं। अगर उक्त रविवार ईस्टर डे हुआ तो घड़ियों में अप्रैल के दूसरे शनिवार की रात को ही परिवर्तन किया जाता है। यह ब्रिटिश समर टाइम अक्तूबर के पहले शनिवार

तक रहता है। इस युद्ध में ब्रिटेन में गरमियों में घड़ियां एक घंटे के बजाय दो घंटे आगे कर दी गयी थीं। इसको डबल ब्रिटिश समर टाइम कहते हैं। डबल ब्रिटिश समर टाइम और ग्रीनिच मीन टाइम में २ घंटे का फर्क था। युद्ध के कारण सन् १९४३ में अक्तूबर समाप्त होने पर भी ब्रिटेन में ब्रिटिश समर टाइम ही चलता रहा।

यूरोप का समय

फ्रान्स में पेरिस टाइम चलता है। बेलजियम और हालैण्ड में ग्रीनिच टाइम ही चलता है। स्विटजरलैण्ड, इटली और मध्य यूरोप में मिड यूरोपियन टाइम चलता है। इसे सेण्ट्रल यूरोपियन टाइम भी कहते हैं। यह ग्रीनिच टाइम से १ घंटा आगे रहता है। वसंत, ग्रीष्म और पतझड़ में यहाँ भी घड़ियाँ एक घंटा और आगे बढ़ा दी जाती हैं। इस बढ़े हुए समय को यूरोपियन समर टाइम कहते हैं।

भारतीय समय

भारत में इण्डियन स्टैण्डर्ड टाइम चलता है जो ग्रीनिच मीन टाइम से ५॥ घंटे आगे रहता है। कहीं-कहीं (जैसे कलकत्ता में) स्थानीय (लोकल) समय भी चलता है। कलकत्ते के लोकल टाइम और भारतीय स्टैण्डर्ड टाइम में २४ मिनट का फर्क रहता है। युद्ध भारत के बहुत पास आ जाने के कारण १९४१ में बिहार, बंगाल, आसाम आदि भारत के पूर्वी प्रांतों में दफ्तरों के लिए एक घंटा समय आगे बढ़ा दिया गया था जिससे दफ्तरके कर्मचारी जल्दी घर चले जायँ और 'चिराग गुल' से होनेवाली दिक्कतों से उन्हें तकलीफ न हो। अब सरकार ने नया स्टैण्डर्ड टाइम भारत भर के लिए चलाया है और घोषणा हुई है कि युद्ध काल तक यह जारी रहेगा।

अमेरिका

अमेरिका बहुत लंबा चौड़ा देश है। न्यूयार्क और सैनफ्रान्सिस्को के देशांतरों में जितना अंतर है उसके आधे से भी कम अंतर कराची और ढाका के देशांतरों का है। इसलिए अमेरिका में चलने वाले समयों में बड़ा अंतर रहता है। पूर्व की ओर ईस्टर्न स्टैण्डर्ड टाइम चलता है और पश्चिम की ओर पैसिफिक स्टैण्डर्ड टाइम। इन दोनों समयों में ३ घंटे का फर्क रहता है। गरमियों में घड़ियाँ एक घंटा आगे बढ़ाने के लिए अमेरिका में ब्रिटेन की तरह कोई कानून नहीं है, पर सुविधा के लिए संघ के विभिन्न देश अपने यहाँ टाइम बढ़ा लेते हैं। अमेरिका का समर टाइम प्रति वर्ष मार्च के पहले सप्ताह से शुरू होता है और अक्तूबर से प्रथम सप्ताह में समाप्त होता है। अमेरिका का शायद ही कोई रेडियो स्टेशन प्रत्यक्ष रूप से भारत में सुनाई देता है पर ब्रिटेन, जर्मनी जैसे देशों से उत्तरी अमेरिका के लिए जो खास ब्राडकास्ट किया जाता है वह सबेरे भारत में भी साफ सुनाई देता है। इन कार्य-क्रमों में अमेरिकन समयों का बारबार जिक्र आता है। इसलिए अमेरिका के समय के बारे में यहाँ कुछ पंक्तियाँ लिख दी गयी हैं। दुनिया के और देशों के समयों के बारे में आगे की तालिका में बताया गया है। जब ग्रीनिच में आधी रात होती है उस समय किस देश में कितना बजा रहता है यह तालिका में दिया गया है। दोपहर के १२ बजे के बाद के समय को १-२ न लिखकर १३, ४ लिखा गया है।

समय	नाम
१४—०	हवाई
१६—०	पैसिफिक स्टैण्डर्ड
१९—०	ईस्टर्न स्टैण्डर्ड (ई. एस. टी)
२०—०	ईस्टर्न डे लाइट सेविंग

समय	नाम
२०—०	अर्जेन्टाइन
२१—०	ब्राजील
२३—०	पश्चिमी अफ्रीका
०—०	ग्रीनिच मीन टाइम (जी. एम. टी)
१—०	सेण्ट्रल यूरोपियन
	ब्रिटिश समर (बी. एस. टी)
२—०	जर्मन समर
	ब्रिटिश डबल समर
	मास्को
	काहरा
	अंकारा
	साउथ अफ्रीकन
५—३०	इण्डियन स्टैण्डर्ड (आइ. एस. टी) (पुराना)
६—३०	इण्डियन स्टैण्डर्ड टाइम (युद्धकालीन) नया
	रंगून
७—०	चुंकिंग
	सैगान (हिन्द चीन)
७—३०	सिंगापुर
८—०	शंघाई
९—०	टोकियो
१०—०	सिडनी
१२—०	न्यूजीलैण्ड

भारतीय रेडियो का भविष्य

यद्यपि आज का आल इण्डिया रेडियो विभाग ब्रिटिश नियन्त्रण के कारण राष्ट्रीय दृष्टि से देश के लिए अधिक लाभदायक नहीं सिद्ध हो रहा है, उलटे उसकी नीति राष्ट्रीय एकता, संघटन और हित की दृष्टि से हानिकारक ही मालूम हो रही है, पर उसका भविष्य उज्ज्वल है। युद्ध के कारण भारतीय रेडियो का स्वरूप बहुत कुछ बदल गया है। इस दृष्टि से वर्तमान युद्ध भविष्य में एक इष्टापत्ति समझी जायगी। जापान के बर्मा तक बढ़ आने के कारण सरकार को भारत के पूर्व और प्रशान्त के सारे देशों में प्रचार के लिए दिल्ली को ही केन्द्र बनाना पड़ा। इस कारण इस स्टेशन की उन्नति बड़ी तीव्र गति से हो रही है। रेडियो के इस युग में राष्ट्रों की विभिन्न शक्तियों में उनके यहाँ के रेडियो की सम्मिलित शक्ति भी गिनी जाती है। जर्मनी ने जब सारे यूरोप पर अधिकार कर लिया था तब वहाँ के विभिन्न देशों के सारे रेडियो स्टेशन भी उसके नियन्त्रण में आ गये थे। इससे उसकी प्रचार शक्ति इतनी अधिक बढ़ गयी थी कि जर्मन जनता के लिए प्रचार करना ब्रिटेन-अमिरीका के लिए एक बड़ी समस्या हो गयी थी। युद्ध के विभिन्न अंगों में—स्थल, जल, आकाश सेना, पंचमांगी आदि—प्रचार-युद्ध या ईथर-युद्ध का विशेष महत्त्व रहता है। शांति काल में भी रेडियो की शक्ति का महत्त्व उतना ही अधिक रहेगा।

युद्धारंभ के पहले अखिल भारतीय रेडियो के स्टेशन—दिल्ली, पेशावर, बम्बई कलकत्ता, लाहौर, लखनऊ, मद्रास, और त्रिचनापली—केवल भारत के लिए ही प्रोग्राम ब्राडकास्ट करते थे। इनमें कुल मिलाकर १३ ध्वनिक्षेपक (ट्रांसमीटर) थे। आज (अक्टूबर १९४४ में) कुल मिलाकर २० ध्वनिक्षेपक यन्त्र काम कर रहे हैं जिनमें ९ तो केवल दिल्ली में हैं। इन में से २ बहुत अधिक शक्तिवाले १०० किलोवाट के शार्ट वेव ट्रांसमीटर हैं जिनकी आवाज कम से कम चार महाद्वीपों में

सुनी जाती है। नयी दिल्ली में नया ब्राडकास्टिंग-भवन भी बन गया है। युद्ध-स्थिति के कारण ही यह काम हो गया अन्यथा अभी इसकी संभावना न थी। अक्टूबर १९४१ में उसका निर्माण-कार्य शुरू हुआ और जुलाई १९४३ में स्टूडियो चालू हो गये। स्थापत्य कला की दृष्टि से भी यह भवन दिल्ली की एक नवीनतम और अत्यन्त आकर्षक इमारत है। नवीनतम उपकरण, हलके रंगों वाले स्टूडियो, प्रत्येक प्रकार की ध्वनि के उपयुक्त यंत्र, सर्व-साधन-संपन्न कण्ट्रोल रूम, छिपे हुए तारों की आश्चर्यजनक व्यवस्था, मनोरम दालान आदि के कारण यह एक अनुपम भवन हो गया है।

युद्धारंभ के बाद १६ दिसम्बर १९३९ को ढाका स्टेशन भी चालू हो गया। मद्रासका एक शक्तिशाली ध्वनिक्षेपक यन्त्र जापानी हमले की आशंका से दिल्ली ले जाया गया। पेशावर का स्टेशन और अधिक शक्तिशाली बनाया गया तथा दिल्ली स्टेशन को सर्वांगपूर्ण बनाने का प्रयत्न किया गया। युद्ध आरंभ होने के समय भारत में केवल तीन ही स्टेशनों में ध्वनिग्राहक केन्द्र (रिसीविंग सेण्टर) थे। अब भारतीय रेडियो के सब स्टेशनों में ऐसे केन्द्र हो गये हैं। पटने में नया ब्राडकास्टिंग स्टेशन खोलने के लिए इमारत आदि बन गयी है, पर यंत्र आदि प्राप्त करने की कठिनाई के कारण स्टेशन संभवत: और एक वर्ष के बाद शुरु हो सकेगा। कराची में भी नया स्टेशन खोलने का विचार किया जा रहा है।

दिल्ली से आजकल हिंदुस्तानी, पंजाबी, बँगला, तामिल, तेलगु, मलयालम, मराठी, गुजराती और पश्तो इन ९ भारतीय तथा अंग्रेजी, फरांसीसी, टोकिनीज, कोचीन-चीनी, मलय, बर्मी, कुओयो, शंघाई, एमाय, केण्टनी, थाई, जापानी, जर्मन, इटालियन, फारसी, अफगानी-फारसी और अरबी इन १७ विदेशी भाषाओं के कार्यक्रम होते हैं। लंदन (बी. बी. सी) रेडियो का संवाददाता भारत से अपने रेडियो को समाचार देता है। अमेरिकन आलोचकों को भी यह सुविधा दी गई है। रेडियो विभाग की ओर से कार्यक्रम के पाक्षिक पत्र भी अंग्रेजी (इंडियन

लिसनर), हिन्दी (सारंग) और उर्दू (आवाज) निकलते हैं। इनकी प्रचार संख्या अप्रैल १९४४ में ६३३५० थी। मार्च १९४४ तक रेडियो विभाग ७७ लाख रुपया खर्च कर चुका था। १९४३-४४ में उसका वार्षिक खर्च ४७ लाख ७७ हजार रुपया हुआ। अखिल भारतीय रेडियो के दिल्ली में लगे १०० किलोवाट शक्ति के जो २ ध्वनिक्षेपक यंत्र हैं वे पूर्व के देशों में सबसे अधिक शक्तिशाली हैं। भारत इनसे ही संसार के दूर दूर के अन्य देशों के साथ निकट का संबंध स्थापित कर सकता है। परिस्थिति अनुकूल होने पर यह एक अत्यन्त शक्तिशाली विभाग हो जायगा। इस विभाग के कारण अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत का एक विशेष स्थान होगा। हम इसीलिए कहते हैं कि भारतीय रेडियो का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है।